Postal Reg. No. M.P./Bhopal/4-340/2017-19
R.N.I.No. 51966/1988,ISSN 2455-2399
Date of Publication 15th July 2018
Date of posting 15th & 20th july 2018

जुलाई 2018 वर्ष 30 अंक 07 मूल्य ₹ 40

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

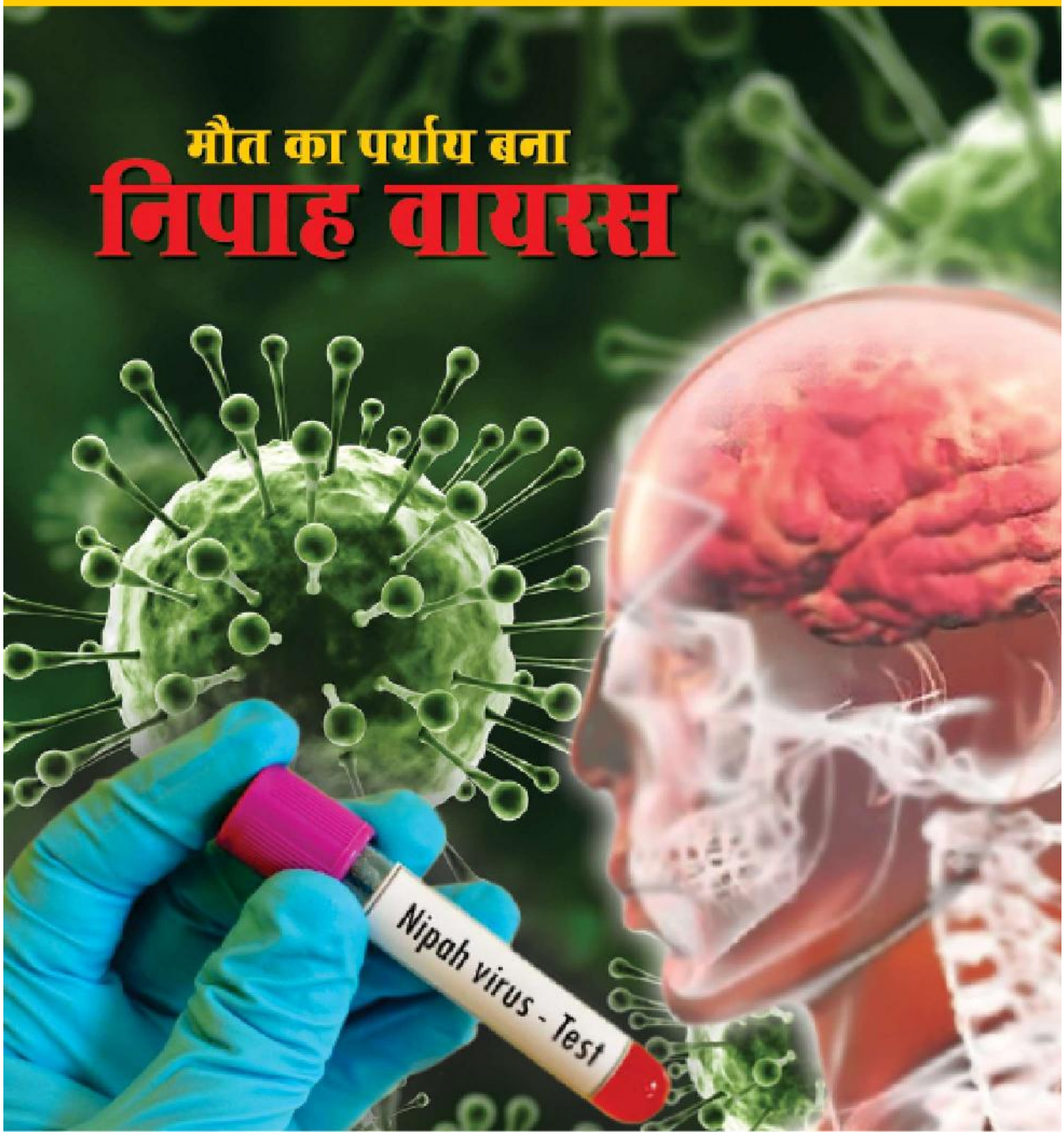

RNI No. 51966/1989
ISSN 2455-2399
www.electroniki.com
जुलाई 2018
वर्ष 30
अंक 7

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान, रामेश्वर गुरु पुरस्कार, भारतेन्दु पुरस्कार तथा सारस्वत सम्मान से सम्मानित

सलाहकार मण्डल

शरदचंद्र बेहार, डॉ. वि.दि. गर्दे, देवेन्द्र मेवाड़ी, डॉ. मनोज कुमार पटैरिया,
डॉ. संध्या चतुर्वेदी, प्रो. विजयकांत वर्मा, डॉ. रविप्रकाश दुबे,
डॉ.अशोक कुमार ग्वाल, डॉ.आर.एन.यादव

संपादक

संतोष चौबे

कार्यकारी संपादक

विनीता चौबे

उप-संपादक

पुष्पा असिवाल

सह-संपादक

मोहन सगोरिया, रवीन्द्र जैन, मनीष श्रीवास्तव

संस्थागत सहयोग

अमिताभ सक्सेना, गौरव शुक्ला, डॉ. राघव, डॉ. विजय सिंह,
डॉ. अनुराग सीठा, डॉ. सत्येन्द्र खरे, संतोष शुक्ला

राज्य प्रसार समन्वयक

शशिकांत वर्मा, लातूर सिंह वर्मा, लियाक़त अली खोखर,
राजेश शुक्ला, दर्शन व्यास, शलभ नेपालिया, अंबरीष कुमार, ए.के.सिंह,
हरीश कुमार पहारे, अभिषेक आनंद, निशांत श्रीवास्तव, रजत चतुर्वेदी

क्षेत्रीय प्रसार समन्वयक

राजीव चौबे, जितेन्द्र पांडे, लुकमान मसूद,
आर.के. भारद्वाज, संजीव गुप्ता, रवि चतुर्वेदी, प्रवीण तिवारी,
अरुण साहू, अभिषेक अवस्थी, विजय श्रीवास्तव, के.आई. जावेद,
असीम सरकार, अमृतेष कुमार, योगेश मिश्रा, संदीप वशिष्ठ,
मनीष खरे, आबिद हुसैन भट्ट, दलजीत सिंह, अजीत चतुर्वेदी,
अनिल कुमार, अमिताभ गांगुली, कुम्भलाल यादव,
राजेश बोस, देबदत्ता बॅनर्जी, नरेन्द्र कुमार

समन्वयक प्रचार एवं विज्ञापन

राजेश पंडा

आवरण एवं डिजाइन

वंदना श्रीवास्तव, अमित सोनी

ऐसा कहना बिलकुल सही है कि युक्तिसंगत सोच और सावधानी से किया गया मापन एक वैज्ञानिक के काम का हिस्सा ठीक उसी तरह होते हैं, जिस तरह हथौड़े और छेनी एक मूर्तिकार के लिए होते हैं। लेकिन दोनों उदाहरणों में ये मात्र औजार का काम करते हैं, न कि उस कार्य की अंतर्वस्तु का।

– वर्नर हाइजेनबर्ग

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए 288

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

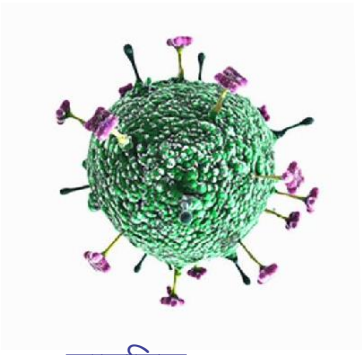

क्रम

सामयिक

निपाह पर क्यों है सबकी निगाह...?
● मनीष मोहन गोरे /05

मौत का पर्याय बना निपाह वायरस
प्रमोद भार्गव /09

आलेख

भारत का परमाणु कार्यक्रम
● शुकदेव प्रसाद /11

भविष्य की प्रभावी प्रौद्योगिकी नैनोभौतिकी
● डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र /15

पसीना क्यों और कैसे आता है?
● सुभाष चंद्र लखेड़ा /18

नासा का मंगल ग्रह मिशन इनसाइट
● कालीशंकर /24

प्रदूषण का कैंसर
● विजन कुमार पांडेय /28

मौसम, मानसून और चक्रवात
● डॉ. विनीता सिंघल /32

डार्क स्काई रिज़र्व क्षेत्र और प्रकाश प्रदूषण
● डॉ. शुभ्रता मिश्रा /36

विज्ञान की अद्भुत शाखा : कैओस सिद्धांत
● प्रदीप /40

विज्ञान कथा

अनोखा उपहार
● प्रज्ञा गौतम /43

कॅरियर

शुगर टेक्नॉलॉजी
● संजय गोस्वामी /47

विज्ञान इस माह

एक चिकित्सक की याद में
● इरफान ह्यूमन /52

संस्थागत समाचार /56

पत्र व्यवहार का पता

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस, एन.एच.–12, होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल–462047

फोन : 0755-6766166 (डेस्क), 0755-6766101, 0755-2432801 (रिसेप्शन), 0755-6766110(फैक्स)

e-mail : electroniki@electroniki.com, website : www.electroniki.com वार्षिक शुल्क : 480/- प्रति अंक : 40/-

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखक के हैं। उनसे संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है।

सभी विवादों का निबटारा भोपाल अदालत में किया जायेगा।

स्वामी, आईसेक्ट लिमिटेड के लिये प्रकाशक व मुद्रक सिद्धार्थ चतुर्वेदी द्वारा आईसेक्ट पब्लिकेशन्स, 25 ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित व आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस एन.एच.-12 होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक- संतोष चौबे।

सामयिक

निपाह पर क्यों हैं सबकी निगाह... ?

डॉ.मनीष मोहन गोरे

मनीष मोहन गोरे विज्ञान प्रसार दिल्ली में वैज्ञानिक के पद पर कार्यरत हैं। वे विज्ञान लेखन के क्षेत्र में विज्ञान कथा और लेख दोनों ही लिखते रहे हैं किन्तु इधर के दो-तीन वर्षों में उन्होंने देशभर के वरिष्ठ विज्ञान लेखकों की साक्षात्कार-शृंखला तैयार की है। विज्ञान लेखन, विज्ञान संचार और विज्ञान जिज्ञासाओं को ध्यान में रखकर उन्होंने जिन वैज्ञानिकों से बातचीत की वह काफी चर्चा में रहे। हमें खुशी है कि 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिये' में हम उन वार्ताओं को नियमित प्रकाशित कर सके हैं।

बर्ड फ्लू और हाइड्रोफोबिया मानव को पशु संपर्क से होने वाले पशुजनित या जूनोटिक रोग होते हैं, इनमें एक नाम और जुड़ गया है निपाह वायरस। बढ़ती मानव आबादी, द्रुत गति से पनपते शहर, इसके फलस्वरूप पशु-पक्षियों के उजड़ते प्राकृतिक आवास, पर्यावरण प्रदूषण, अपर्याप्त स्वच्छता, बदलती पर्यावरण दशाएं, पशु संबंधी व्यापार और मानव पशु के बीच बढ़ते संपर्क इन बीमारियों के कुछ प्रमुख कारण होते हैं। इसी पृष्ठभूमि में विकासशील देशों में जूनोटिक रोगों की समस्या प्रबल होती जा रही है और इसका बोझ विकसित देशों की अपेक्षा विकासशील देशों में कई गुना अधिक है।

निपाह वायरस (छपट) उभरते हुए जूनोटिक या पशुजनित रोग का एक प्रासंगिक उदाहरण है जिसकी कुछ घटनाएं कोझिकोड (केरल) में पिछले महीने सामने आईं और जनमानस में चर्चा का विषय बनी हैं। वायरस या विषाणु दरअसल जीव और निर्जीव दोनों के ही लक्षण प्रकट करता है और वैज्ञानिकों के लिए आज भी यह एक पहेली बना हुआ है। जब ये किसी जीवधारी की कोशिका में प्रवेश करता है तो उसमें पहुँचकर सजीव के समान प्रजनन आरम्भ कर देता है लेकिन निर्जीव निकाय में कोई प्रजनन या जीवन के लक्षण प्रकट नहीं करता। संभवतः सजीवों के विकास की आरंभिक प्राकृतिक प्रक्रियाओं के दौरान वायरस उनके पूर्वज रहे, इस वजह से वायरस को वैज्ञानिक सजीव और निर्जीव के बीच की कड़ी मानते हैं।

निपाह वायरस का स्यापा

निपाह वायरस पिछले करीब दो दशकों के दौरान दक्षिण पूर्व एशिया में उभरने वाला एक संक्रामक रोग है। इस वायरस को यह विशेष नाम मलेशिया के गांव के कारण दिया गया है जहां इसका प्रकोप सबसे पहले 1998 में दुनिया के सामने आया था। यह वायरस हेनिपा वायरस वंश का एक सदस्य है। इस वंश में केवल दो वायरसों को वैज्ञानिकों ने खोजा है और निपाह के अलावा दूसरे वायरस का नाम हेंड्रा है। वायरस और बैक्टीरिया जैसे सूक्ष्मजीव प्रकृति में स्वच्छन्द रूप से रहते हैं या फिर किसी जीव के शरीर में वास करते हैं। निपाह वायरस का प्राकृतिक वास टेरोपस वंश के चमगादड़ होते हैं। अब ये

मलेशिया की सुअर आबादी में संक्रामक रोगों का मुख्य जिम्मेदार यह निपाह वायरस था परंतु क्लिनिकल लक्षण अन्य वायरसजनित संक्रामक रोगों से अलग नहीं थे। इसलिए यह स्पष्ट नहीं हो पाया कि वास्तव में कौन सा वायरस जिम्मेदार है। साल 1999 में सिंगापुर के बूचड़खाने में काम करने वाले लोगों को उन सुअरों से एक संक्रामक रोग हुआ जिन्हें मलेशिया से लाया गया था।

चमगादड़ जिस पर्यावरण में रहते हैं, जो कुछ खाते हैं, जहाँ मल-मूत्र त्याग करते हैं, उनके संपर्क में आने वाले पशु-पक्षी या मनुष्य को निपाह वायरस का संक्रमण हो जाता है। मलेशिया में इन चमगादड़ों के वैज्ञानिक अध्ययन से यह बात सामने आई है कि जिन फलों का कुछ हिस्सा खाकर उन्होंने छोड़ दिया, उनमें और चमगादड़ के मल-मूत्र के नमूनों में निपाह वायरस पाए गए हैं। जिन मनुष्यों ने जाने अनजाने में उन फलों को खा लिया या संक्रमित चमगादड़, उसके मल-मूत्र के संपर्क में आए, उनके मस्तिष्क और मेरुरज्जू द्रव में यह वायरस मौजूद पाया गया। चमगादड़ों के अलावा सुअर में भी निपाह वायरस पाए जाते हैं। मलेशिया में इस संक्रामक वायरस के प्रकोप में इन दोनों प्राणियों की भूमिका थी। कुत्ते, बिल्ली और घोड़े में भी निपाह वायरस की पुष्टि होना शेष है। वैसे तो चमगादड़ एक स्तनधारी प्राणी है, मगर यह पक्षियों की तरह प्रवास यात्राएँ करता है जिसके कारण निपाह वायरस से संक्रमित चमगादड़ उड़कर जहाँ तक पहुँचता है, वहाँ के पर्यावरण में इस वायरस को पहुँचा देता है। दक्षिण पूर्व एशिया के बांग्लादेश, कंबोडिया, थाइलैंड और भारत जैसे प्रभावित देशों में यह इसी तरीके से अपने पाँव पसार रहा है। समग्रता में देखा जाए तो 1998 से लेकर अभी तक इस वायरस ने 600 से अधिक लोगों को अपनी चपेट में लिया है और इस वायरस के संक्रमण से मरने वाले व्यक्तियों की संख्या 260 से अधिक दर्ज की गई है। साथ ही इस वायरस के प्रकोप में जंतु से मनुष्य और मनुष्य से मनुष्य दोनों ही प्रकार के संक्रमण की पुष्टि हुई है। इस वायरस संबंधी संक्रमण के मनुष्यों में जो प्रमुख लक्षण प्रकट होते हैं, वे हैं बुखार, चक्कर आना, सिर दर्द और उल्टी। इस संक्रमण में इंसेफेलाइटीस के समान लक्षण भी प्रकट होते हैं।

मलेशिया, बांग्लादेश से होता हुआ भारत पहुँचा निपाह वायरस

विश्व में निपाह वायरस के संक्रमण की पहली घटना 1998 में मलेशिया में दर्ज की गई थी। वहाँ सितंबर 1998 से लेकर मई 1999 तक 9 महीनों की अवधि के दौरान असंख्य मनुष्य इस वायरस की चपेट में आए। उसी दौरान मलेशिया जापानी इंसेफेलाइटीस का प्रकोप झेल रहा था और चूंकि निपाह वायरस के संक्रमण में भी इंसेफेलाइटीस जैसे लक्षण प्रकट होते हैं, इसलिए आरंभ में इस निपाह संक्रमण को भूलवश जापानी इंसेफेलाइटीस ही मान लिया गया। उस 9 महीने की अवधि में निपाह संक्रमण से प्रभावित कुल 265 लोगों में से 105 लोगों की अकाल मृत्यु हो गई। उत्तरी कुआलालंपुर से लगभग 200 किलोमीटर दूर किन्ता जिले के ईपोह इलाके के सुअर पालकों में निपाह का प्रकोप शुरू हुआ। यहाँ से इसका संक्रमण आस पास के सुअर पालन क्षेत्रों में तेजी से फैल गया। मलेशिया के कामपुंग सुगई निपाह गाँव से जब इस वायरस को पहली बार पृथक किया गया तो इसका नाम इस गाँव के नाम पर निपाह वायरस रख दिया गया।

जैसा पहले चर्चा की गई है कि मलेशिया की सुअर आबादी में संक्रामक रोगों का मुख्य जिम्मेदार यह निपाह वायरस था परंतु क्लिनिकल लक्षण अन्य वायरसजनित संक्रामक रोगों से अलग नहीं थे। इसलिए यह स्पष्ट नहीं हो पाया कि वास्तव में कौन सा वायरस जिम्मेदार है। साल 1999 में सिंगापुर के बूचड़खाने में काम करने वाले लोगों को उन सूअरों से एक संक्रामक रोग हुआ जिन्हें मलेशिया से लाया गया था। वहीं दूसरी तरफ भारत में निपाह वायरस का मनुष्यों में संक्रमण दो बार दर्ज किया गया और ये दोनों मामले पश्चिम बंगाल के थे। पहला 2001 में सिलीगुड़ी में और दूसरा 2007 में नादिया में। इन दोनों मामलों में निपाह वायरस का संक्रमण सुअर से मनुष्यों को नहीं हुआ था। 2007 के प्रकोप में एक पीड़ित मरीज के घर के ठीक सामने मौजूद पेड़ों पर चमगादड़ों का झुण्ड रहता था। इन दोनों मामलों से कुल 71 व्यक्ति प्रभावित हुए और उनमें से 50 लोगों की मृत्यु हो गई। इस तरह पाया गया कि मलेशिया में तो निपाह वायरस मनुष्यों में सुअरों से

पहुँचा मगर बांग्लादेश और भारत में यह वायरस चमगादड़ों के माध्यम से दाखिल हुआ। मलेशिया में 1999 के बाद इस वायरस के संक्रमण में एक तरह से ठहराव सा आ गया। लेकिन भारत में इसका संक्रमण 2001 और 2007 के बाद इस वर्ष 2018 में तीसरी बार हुआ है परंतु बांग्लादेश में 2001 से 2013 के दौरान इसका संक्रमण अनगिनत बार हुआ है। हालांकि मलेशिया में निपाह संक्रमण के वाहक सुअर और चमगादड़ ही थे। मगर बांग्लादेश में इसका वाहक केवल चमगादड़ ही था। इसलिए वैज्ञानिकों और स्वास्थ्य विशेषज्ञों का मत है कि बांग्लादेश में निपाह का मनुष्यों में संक्रमण चमगादड़ के सीधे संपर्क या चमगादड़ से संदूषित पदार्थों के संपर्क में आने से हुआ। 2004 में बांग्लादेश में इस संक्रमण के दौरान मनुष्य से मनुष्य के बीच संक्रमण ने भी अहम भूमिका निभाई थी। चूंकि पश्चिम बंगाल की भौगोलिक विशेषताएं बांग्लादेश के समान हैं इसलिए यहाँ पर निपाह के संक्रमण में पर्यावरणीय परिस्थितियों की समानता जिम्मेदार रहीं। यही वजह है कि 2001 में सिलीगुड़ी में निपाह संक्रमण की महामारी संबंधी विशेषताएं बांग्लादेश के पिछले वर्षों के संक्रमण से मेल खाती हैं। निपाह वायरस के आनुवंशिक पदार्थों और वायरस स्ट्रेनों के विश्लेषण से इस बात का खुलासा हुआ है कि बांग्लादेश के निपाह वायरस मलेशिया प्रकोप से पृथक किये गए वायरस से निकट समानता प्रकट कर रहे थे। इससे यह बात स्पष्ट होती है कि इन विषाणुओं के स्ट्रेन प्रकृति में साथ-साथ विकसित हुए हैं।

चांग और उनके सहयोगी शोधकर्ताओं ने निपाह वायरस के संबंध में शोध के बाद पाया कि यह वायरस चमगादड़ से मनुष्यों और संक्रमित मनुष्य से अन्य मनुष्यों के बीच संचरित हो सकता है। एशिया और अफ्रीका के बड़े हिस्सों में चमगादड़ों के 10 वंश तथा 23 प्रजातियों में इस वायरस की मौजूदगी पाई गई। दरअसल चमगादड़ उड़कर दूर-दूर तक चले जाते हैं और इनका व्यापक समाज होता है, इसलिए इनमें किसी रोगाणु का संचरण तेजी से हो जाता है।

निपाह वायरस का संक्रमण

निपाह पैरामिक्सोविरीडी वायरस कुल के उपकुल पैरामिक्सोविरिनी से संबंधित होता है जिसके पाँच वंश अभी तक पहचाने गए हैं रेस्पाइरो, मोर्बिलाई, रुबुला, एवुला और हेनिपावायरस। हेनिपावायरस वंश में दो प्रमुख रोगकारक वायरस पाए जाते हैं हेंड्रा और निपाह जो कि मनुष्यों में रोग को जन्म देते हैं। हेंड्रा वायरस का 1994 में और निपाह को 1998 (मलेशिया) में पता लगाया गया था।

स्वास्थ्यकर्मियों के द्वारा अध्ययन से यह ज्ञात हुआ कि मनुष्यों में निपाह वायरस के संक्रमण के लिए मुख्य जिम्मेदार सुअर या सुअर उत्पादों से सीधा संपर्क था। मलेशिया में संक्रमित सुअरों के मूत्र, लार जैसे उत्सर्जनों के संपर्क में आने से स्वस्थ सुअर भी निपाह वायरस की चपेट में आ गए थे। ऐसे संक्रमित सुअरों की पहचान कर उन्हें स्वस्थ आबादी से दूर करके निपाह संक्रमण को समाप्त किया जा सकता है। हमने देखा कि भारत में चमगादड़ निपाह के संचरण में वाहक की भूमिका निभाते हैं। चमगादड़ अक्सर खजूर के वृक्ष (डेट पाम) का रस पीते हैं और जो चमगादड़ निपाह वायरस से संक्रमित हो जाते हैं, वे यह रस पीते या इसका फल खाते समय अपने लार में मौजूद वायरस को खजूर के फल या उसके रस में छोड़ देते हैं। अब ये खजूर जब बाजार में पहुँचते हैं और जो व्यक्ति इसे खाता है, उस तक यह वायरस पहुँच जाता है।

निदान और नियंत्रण

सुअर में सांस से संबंधित परेशानी और लक्षण उनके निपाह वायरस से संक्रमित होने के लक्षण के रूप में सामने आते हैं। इसे पोर्सिन रेस्पिरेटरी और न्यूरोलाजिक सिंड्रोम या

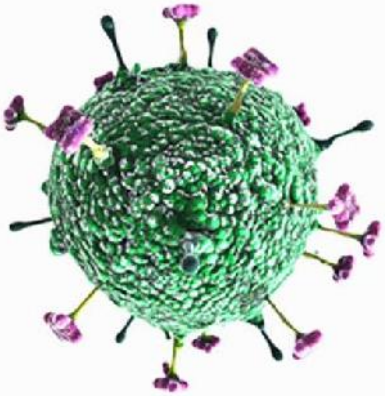

भारत में चमगादड़ निपाह के संचरण में वाहक की भूमिका निभाते हैं। चमगादड़ अक्सर खजूर के वृक्ष (डेट पाम) का रस पीते हैं और जो चमगादड़ निपाह वायरस से संक्रमित हो जाते हैं, वे यह रस पीते या इसका फल खाते समय अपने लार में मौजूद वायरस को खजूर के फल या उसके रस में छोड़ देते हैं। अब ये खजूर जब बाजार में पहुँचते हैं और जो व्यक्ति इसे खाता है, उस तक यह वायरस पहुँच जाता है।

निपाह वायरस को अंतर्राष्ट्रीय तौर पर जैव सुरक्षा के चौथे स्तर (बीएसएल 4) के एजेंट के रूप में वर्गीकृत किया गया है। निपाह वायरस के नमूनों को एकत्र करने के दौरान अगर जैव सुरक्षा के दूसरे स्तर (बीएसएल 2) की सुविधाएं मौजूद हों तो इस वायरस को निष्क्रिय किया जाना संभव है। वैसे वर्तमान समय में निपाह वायरस संक्रमण के लिए कोई कारगर और प्रभावशाली उपचार नहीं है। रिबावारिन एक एंटी वायरल ड्रग है जो निपाह वायरस संक्रमण में उपचार के लिए प्रयोग की जाती है।

बार्किंग पिग सिंड्रोम के नामों से भी जाना जाता है। मनुष्य में यदि निपाह का संक्रमण है तो उसमें बुखार और मांसपेशियों में दर्द होता है जो कि इंफ्लुएंजा के लक्षणों से समानता प्रकट करता है। कुछ मामलों में तो मस्तिष्क में गर्मी के लक्षण भी सामने आते हैं। कुछ मरीज कोमा में भी चले जाते हैं। इन तमाम लक्षणों के दरम्यान पीड़ित व्यक्ति में इंसेफेलाइटीस के लक्षण भी प्रकट होते हैं।

प्रयोगशाला में निपाह वायरस संक्रमण की जाँच के लिए सीरोलाजी, हिस्टोपैथोलाजी, पीसीआर और वायरस आइसोलेशन की प्रक्रियाएं की जाती हैं तथा संक्रमण की पुष्टि के लिए सीरम न्यूट्रलाइजेशन परीक्षण, एलिजा, आरटी-पीसीआर जैसी वैज्ञानिक प्रक्रियाएं पूरी की जाती हैं। दक्षिण पूर्व एशिया के अधिकांश देशों में निपाह वायरस की पहचान और निदान के लिए पर्याप्त सुविधाएं मौजूद नहीं हैं। बांग्लादेश, भारत और थाइलैंड में इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक प्रयोगशाला सामर्थ्य का विकास किया गया है। भारत में स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के अधीन कार्यरत भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद (आईसीएमआर) ने निपाह वायरस के प्रकोप संबंधी रोग निदान हेतु आवश्यक अनुसंधान किए हैं।

निपाह वायरस को अंतर्राष्ट्रीय तौर पर जैव सुरक्षा के चौथे स्तर (बीएसएल 4) के एजेंट के रूप में वर्गीकृत किया गया है। निपाह वायरस के नमूनों को एकत्र करने के दौरान अगर जैव सुरक्षा के दूसरे स्तर (बीएसएल 2) की सुविधाएं मौजूद हों तो इस वायरस को निष्क्रिय किया जाना संभव है। वैसे वर्तमान समय में निपाह वायरस संक्रमण के लिए कोई कारगर और प्रभावशाली उपचार नहीं है। रिबावारिन एक एंटी वायरल ड्रग है जो निपाह वायरस संक्रमण में उपचार के लिए प्रयोग की जाती है। केरल सरकार ने निपाह के संकट से निपटने के लिए रिबावारिन के दो हजार टैबलेट खरीदे हैं और आगे के लिए इसके मरीजों में वितरण हेतु आठ हजार टैबलेट खरीदने की प्रक्रिया अभी जारी है। स्वास्थ्य विशेषज्ञों का मानना है कि यह दवा चूंकि एक शेड्यूल्ड दवा है। मिचली, उल्टी और पेट में मरोड़ जैसी सामान्य शारीरिक परेशानियों के अलावा यह दवा गुर्दे और हृदय जैसे महत्वपूर्ण अंगों पर अनेक साइड इफेक्ट उत्पन्न करती है। इसलिए इसका सेवन चिकित्सकीय परामर्श और गहन मेडिकल परीक्षण के बाद ही किया जाना श्रेयस्कर है। निपाह संक्रमण से पीड़ित व्यक्ति के उपचार के दौरान चिकित्सकों के द्वारा अधिकांश तौर पर बुखार और तंत्रिका संबंधी लक्षणों के प्रबंधन पर जोर दिया जाता है। यदि कोई व्यक्ति इस संक्रमण से बुरी तरह पीड़ित है तो उसे तत्काल अस्पताल में भर्ती कर अनुभवी चिकित्सक की देख-रेख में इलाज कराना उचित होता है।

निपाह वायरस के संक्रमण और प्रकोपों में अक्सर देखने में आता है कि पीड़ित व्यक्ति की स्वास्थ्य देखभाल के दौरान स्वास्थ्यकर्मी को इस वायरस का संक्रमण हो जाता है। यह संक्रमण लार, खून, मूत्र और दूसरे किसी ऊतक के सम्पर्क से होता है। इसलिए ऐसे में उपचार और स्वास्थ्य देखभाल के मानक दिशा निर्देशों और सावधानियों का पालन किया जाना बेहद जरूरी हो जाता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने निपाह वायरस संक्रमण के संबंध में मानक सावधानियों का विवरण तैयार किया है जो कि इस वेबसाइट लिंक http://www.who.int/csr/resources/publications/standardprecautions/en/index.html पर जनमानस के लिए उपलब्ध है। निपाह वायरस संक्रमण और इसके प्रकोप की नियंत्रण युक्तियों को शीघ्रता से अपनाकर इससे होने वाली रुग्णता व रोग से होने वाली मृत्यु पर काबू पाया जाना संभव है। संक्रमण फैलाने वाले जंतुओं पर निगरानी रखकर, नियंत्रणकारी अनुसन्धान को प्रोत्साहन देकर और प्रभावित देशों के बीच संस्थागत सहयोग को बढ़ावा देकर इस संक्रमण पर नियंत्रण पाया जा सकता है। इन प्रयासों के साथ-साथ आम आदमी को खानपान और व्यक्तिगत स्वच्छता को लेकर शिक्षित करना निपाह वायरस के बारे में जागरूकता लाना भी आवश्यक है।

mmgore1981@vigyanprasar.gov.in

लिनी कोझिकोड के पेराबंरा तालुक अस्पताल में काम करते हुए निपाह की चपेट में आ गई थी। लिनी को इस घातक वायरस की चपेट में आने का अनुभव हुआ तो वह समझ गई कि अब उसके प्राण निकलने वाले हैं। लिहाजा उसने बहरीन में रहने वाले अपने पति को एक दर्दभरी चिट्ठी में मलायम भाषा में लिखा, 'मैं अंतिम सफर पर हूँ, लगता नहीं है कि मैं अब कभी तुमसे मिल पाऊंगी। बच्चों का ध्यान रखना और इन्हें अपने साथ खाड़ी ले जाना।'

प्रमोद भार्गव

प्रमोद भार्गव एक पत्रकार और विज्ञान संचारक के रूप में देशभर में जाने जाते हैं वहीं उनका दूसरा पक्ष एक लोकप्रिय कथाकार का भी है। समकालीन परिदृश्य और समसामयिक विषयों जिनमें विज्ञान भी शामिल है, पर प्रमोद भार्गव की गहरी नज़र रहती है। वे तात्कालिक विज्ञान-अनुसंधान और हलचल पर लिखने के लिये खासे चर्चित हैं। प्रमोद भार्गव म.प्र. के शिवपुरी में निवास करते हैं।

केरल के कोझिकोड जिले में रहस्यमय और बेहद घातक निपाह विषाणु की चपेट में आकर दस लोगों की मौत हो गई और छह की हालत नाजुक बनी हुई है। इस विषाणु की चपेट में आए पच्चीस रोगियों को विशेष निगरानी के लिए आईसीयू में रखा गया है। इस वायरस की चपेट में आकर सबसे ज्यादा पीड़ा पहुँचाने वाली करुणाजनक मौत नर्स लिनी पुथुसेरी की हुई। यह नर्स अपनी जान जोखिम में डाल कर निपाह से पीड़ित रोगियों की सेवा में लगी हुई थी। इस नाते उसने अपने पुनीत दायित्व का निर्वहन करते हुए मानवता के तकाजे को अहमियत दी। लिनी कोझिकोड के पेराबंरा तालुक अस्पताल में काम करते हुए निपाह की चपेट में आ गई थी। लिनी को इस घातक वायरस की चपेट में आने का अनुभव हुआ तो वह समझ गई कि अब उसके प्राण निकलने वाले हैं। लिहाजा उसने बहरीन में रहने वाले अपने पति को एक दर्दभरी चिट्ठी में मलायम भाषा में लिखा, 'मैं अंतिम सफर पर हूँ, लगता नहीं है कि मैं अब कभी तुमसे मिल पाऊंगी। बच्चों का ध्यान रखना और इन्हें अपने साथ खाड़ी ले जाना।' हालांकि इस पत्र के लिखे जाने के बाद और लिनी की मौत होने के दो दिन पहले ही उसका पति सजीश भारत आ गया था। केरल के मुख्यमंत्री पिनारई विजयन ने इस मृत्यु को अतुलनीय बलिदान माना है।

एड्स, हीपेटाईटिस-बी, स्वाइन-फ्लू, बर्ड-फ्लू और इबोला के बाद अब निपाह वायरस वैश्विक आपदा के रूप में पेश आ रहा है। क्योंकि यह संक्रामक बीमारी है, इसलिए दुनियाभर में आसानी से फैल सकती है। निपाह विषाणु से पीड़ित सबसे पहले रोगी मलेशिया के कोपुंग सुंगई निपाह में मिले थे। यह संक्रमण सबसे पहले घरेलू सुअरों में देखा गया, लेकिन बाद में इंसानों में फैल गया। इस दौरान यहां निपाह की चपेट में आकर ढाई सौ से भी ज्यादा लोग मारे गए थे। यह विषाणु निपाह क्षेत्र में मिला था, इसलिए इसका नाम 'निपाह वायरस रखा गया। 2004 में बांग्लादेश में इस वायरस ने इंसानों पर हमला बोल दिया। इसी समय 2001 से 2007 के बीच भारत के पश्चिम बंगाल में भी इस विषाणु ने घुसपैठ कर ली। इसका असर उन्हीं इलाकों में देखा गया जो भारत की सीमा से सटे हुए थे। दोनों ही साल इसके 71 मरीज देखने में आए थे, जिनमें से 50 की मौत हो गई थी। यह रोग संक्रमक है, इसलिए एक इंसान से दूसरे इंसान में आसानी से फैल जाता है। यह सीधे मनुष्य के मस्तिष्क पर हमला करता है। इसके द्वारा हमला बोलते ही इसके लक्षण साँस लेने में तकलीफ, तेज बुखार, जलन, चक्कर और भटकाव के रूप में दिखाई देने लगते है।

निपाह और इबोला के विषाणु संक्रमित पशु-पक्षी से मनुष्य में फैलते हैं। यह विषाणु बंदर, फ्रूट बैट (फलों पर निर्भर खास तरह के चमगादड) उड़ने वाली लोमडी और सुअरों के खून या तरल पदार्थ से फैलते हैं। इन पदार्थों में लार, मूत्र, मल और पसीना प्रमुख हैं। संक्रमित हुए व्यक्तियों से यह विषाणु दूसरे व्यक्तियों में पहुँच जाता है। ये विषाणु धागे जैसा होते हैं। विषाणु मनुष्य में संक्रमण फैलाने के लिए काफी असरकारी है। यह विषाणु शाखाओं में भी विभाजित होता है।

यदि इस बीमारी को तुरंत काबू में लेने के उपाय नहीं किए गए तो अड़तालीस घंटे के भीतर व्यक्ति कोमा में चला जाता है और फिर उसका इलाज असंभव हो जाता है। नतीजतन रोगी की मृत्यु हो जाती है। इस रोग की जान लेने की क्षमता 75 प्रतिशत से 100 प्रतिशत के बीच है। इस वायरस की खासियत यह भी है कि इसमें अनुकूलन की क्षमता बेहिसाब होती है। नतीजतन यह एच-1 और एन-1 विषाणु की तरह पर्यावरण के हिसाब से खुद को ढाल लेता है। इस कारण दवाओं से यह निष्क्रिय तो हो जाता है, लेकिन मरता नहीं है। लिहाजा भविष्य में इसके फिर से शरीर में सक्रिय होने के खतरे बने रहते है।

केरल में यह फ्रूट बैट्स की वजह से फैला है। यह टेरोपस जीनस प्रजाति की चमगादड़ में मिलता है। इसके जूठे फल या सब्जी मनुष्य, मवेशी या जंगली जानवर खा लें तो ये सब निपाह वायरस की चपेट में आ जाते हैं। केरल में इसके जूठे खजूर खाने से कोझिकोड के लोग जानलेवा निपाह विषाणु की गिरफ्त में आकर जान गंवा बैठे। जबकि लिनी की मौत रोगियों से सवंमित हुए विषाणु से हुई। पुणे के राष्ट्रीय विषाणु संस्थान (नेशनल वीरोलॉजी इंस्टीट्यूट) ने रोगियों की रक्त जांच के बाद इस वायरस की पुष्टि की है। यह वायरस सिंगापुर के लोगों को भी अपनी चपेट में ले चुका है। फ्रूट बट्स से ही भारत व अन्य देशों में इबोला वायरस फैला था। निपाह या इबोला वायरस से पीड़ित रोगों का अभी पर्याप्त इलाज संभव नहीं हुआ है। निपाह पर नियंत्रण के लिए रिबावायरिन दवा दी जाती है। यदि शुरूआती लक्षणों के सामने आते ही रोग पकड़ में आ जाता है, तब तो एक बार इसका इलाज संभव है, अन्यथा रोगी को बचाना मुश्किल है। यह बीमारी यदि फैलती चली जाए तो महामारी का रूप भी धारण कर लेती है। जिन पेड़ों या उसके आसपास के पेड़ों पर चमगादड़ों का निवास हो तो उन पेड़ों से नीचे गिरे जूठे फल खाने से बचना चाहिए। क्योंकि चिकित्सा के क्षेत्र में अनेक वैश्विक उपलब्धियों के बावजूद निपाह जैसे प्राणघातक चुनौतियों से निपटना संभव नहीं हो पा रहा है।

ऐसा कहा जा रहा है कि निपाह और इबोला के विषाणु संक्रमित पशु-पक्षी से मनुष्य में फैलते हैं। यह विषाणु बंदर, फ्रूट बैट (फलों पर निर्भर खास तरह के चमगादड) उड़ने वाली लोमडी और सुअरों के खून या तरल पदार्थ से फैलते हैं। इन पदार्थों में लार, मूत्र, मल और पसीना प्रमुख हैं। संक्रमित हुए व्यक्तियों से यह विषाणु दूसरे व्यक्तियों में पहुंच जाता है। ये विषाणु धागे जैसा होते हैं। विषाणु मनुष्य में संक्रमण फैलाने के लिए काफी असरकारी है। यह विषाणु शाखाओं में भी विभाजित होता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने निपाह को तेजी से फैलता हुआ वायरस बताया है। उसने हिदायत दी है कि यह जानवरों और इंसानों में गंभीर बीमारी को संक्रमित कर सकता है, क्योंकि इसके फैलने की रफ्तार बहुत अधिक है। अभी तक सामने आई जानकारी के मुताबिक निपाह का संक्रमण जापानी बुखार से हुआ है। जो सीधे-सीधे दिमाग पर असर डालकर इंसान को बेहोशी के दायरे में ले आता है। कुछ सालों से एक के बाद एक विषाणुओं की पहचान कर उन्हें मनुष्य में संक्रमण के लिए असरकारी बताया गया है। लेकिन तमाम प्रकार की तकनीकि जाचों और रोग-निदान के उपाय के बावजूद विषाणुओं को स्थाई रूप से काबू में नहीं लिया जा सका है। इसलिए जब भारत और अन्य तीसरी दुनिया के देशों की आबादी जब जापानी बुखार की चपेट में आती है तो एकाएक हजारों बच्चों और स्त्री-पुरुषों की मौत हो जाती है। निपाह वायरस की पहचान हुए भी दो दशक से भी ज्यादा का समय हो चुका है। बावजूद न तो इसके उपचार की कारगर दवाएं बनाई जा सकी हैं और न ही ऐसा टीका बन पाया है, जो इस बीमारी को पनपने ही न दे। इन कारणों के चलते फिलहाल इन जानलेवा वायरसों से बचने के उपाय सावधानी बरतना ही है।

pramod.bhargava15@gmail.com

आलेख

भारत का परमाणु कार्यक्रम

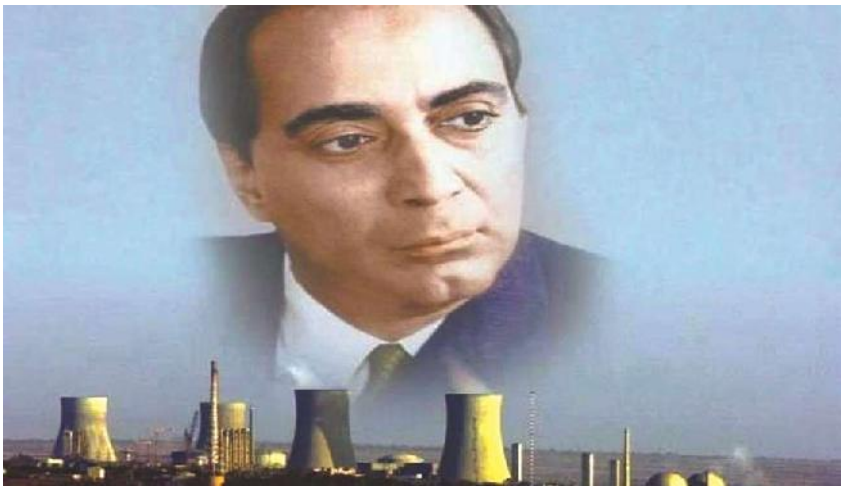

शुकदेव प्रसाद

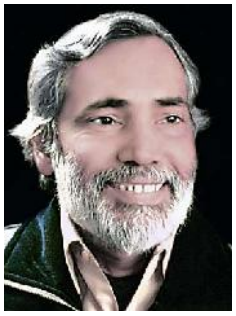

समकालीन विज्ञान लेखकों में शुकदेव प्रसाद का नाम अग्र पंक्ति में शुमार है। वे पिछले चार दशकों से विज्ञान लेखन कर रहे हैं। देश विदेश में वे अपने विज्ञान लेखन के लिए उन्हें कई पुरस्कार और सम्मान प्रदान किये गये हैं। कई विज्ञान किताबों की रचना के साथ ही उन्होंने विज्ञान ग्रंथों और संचयन का संपादन किया है। शुकदेव प्रसाद इलाहाबाद में रहते हैं।

भारत में परमाणु अनुसंधान के जनक होने का श्रेय स्व. डॉ. होमी जहांगीर भाभा (1909-1966) को है और सच तो यह है कि आप के कुशल निर्देशन में अंतरिक्ष अनुसंधानों की भी आधारशिला रखी गई थी, बाद में डॉ. भाभा के निधन के बाद डॉ. विक्रम अंबालाल साराभाई ने अंतरिक्ष संधानों की बागडोर संभाली।

1944 में डॉ. भाभा ने टाटा ट्रस्ट के तत्कालीन अध्यक्ष श्री दोराव जी टाटा को एक पत्र लिखकर भावी भारत के लिए परमाणु बिजली की उपयोगिता पर प्रकाश डाला और परमाणु संधानों के लिए एक प्रयोगशाला की स्थापना पर जोर डाला।

'अब से कुछ वर्षों बाद जब परमाणु ऊर्जा का बिजली पैदा करने में सफलतापूर्वक उपयोग होने लगेगा, तब मुझे विश्वास है कि भारत को अपने लिए विशेषज्ञ बाहर से नहीं बुलाने पड़ेंगे वरन् वे अपने देश में तैयार मिलेंगे।'

कहने की आवश्यकता नहीं कि सर टाटा ने तत्काल इस संस्थान की स्थापना के लिए धन देना स्वीकार कर लिया और पेडर रोड, मुंबई के एक छोटे से फ्लैट में एक प्रयोगशाला स्थापित की गई और इस तरह टाटा ट्रस्ट के अनुदान से मुंबई में 'टाटा आधारभूत अनुसंधान संस्थान' (Tata Institute of Fundamental Research-TIFR) की स्थापना हुई। वस्तुतः कास्मिक किरणों तथा सैद्धांतिक भौतिकी से सम्बन्धित अनुसंधानों हेतु डॉ. भाभा के लिए इस प्रयोगशाला की स्थापना हुई थी। स्वाधीन भारत में यह संस्थान विकास कार्यक्रमों का आधार स्तंभ बना।

1948 में डॉ. भाभा की अध्यक्षता में परमाणु ऊर्जा आयोग (Atomic Energy Commission) का गठन किया गया। आगे चलकर 1954 में परमाणु ऊर्जा प्रतिष्ठान (Atomic Energy Establishment) की ट्राम्बे में स्थापना की गई। डॉ. भाभा के निधन के बाद उनकी स्मृति में श्रीमती गांधी ने, जनवरी 1967 में इसका नामकरण किया-भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र (Bhabha Atomic Research Centre- BARC)।

यही केंद्र भारत में परमाणु विकास का राष्ट्रीय केंद्र है, जहाँ से सारे कार्य संचालित होते हैं। यहां परमाणु भट्टियों के अभिकल्पन, निर्माण एवं नियंत्रण विषयक शोध

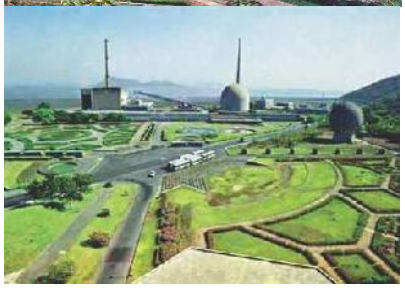

अप्सरा

'पूर्णिमा' का अभिकल्पन और निर्माण भारतीय वैज्ञानिकों ने 1972 में किया। फास्ट रिएक्टरों के क्षेत्र में परीक्षण हेतु शून्य ऊर्जा वाले 'पूर्णिमा' रिएक्टर की स्थापना की गई थी। इसमें थोड़े सुधार परिवर्तन के बाद इस श्रेणी के अगले रिएक्टर 'पूर्णिमा-II' का निर्माण किया गया जो 10 मई, 1984 को क्रिटिकल हुआ। 'पूर्णिमा-III' 1990 में क्रिटिकल हुआ। ईंधन के रूप में यूरेनियम-233 प्रयुक्त करने वाला संसार का प्रथम रिएक्टर पूर्णिमा ही है।

कार्य होते हैं तथा परमाणु ईंधनों के निर्माण एवं पुनर्साधन तथा रेडियो आइसोटोपों का निर्माण भी होता है। इस केंद्र ने उद्योग, औषधि तथा कृषि के क्षेत्र में रेडियो आइसोटोपों के इस्तेमाल सहित परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण कार्यों में उपयोग हेतु प्रौद्योगिकियों का विकास किया है। कई प्रौद्योगिकियों का हस्तांतरण उद्योगों के व्यावसायिक उपयोग के लिए भी किया गया है।

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र परमाणु विद्युत कार्यक्रम तथा उद्योग व खनिज क्षेत्र की इकाइयों को अनुसंधान एवं विकास संबंधी सहायता भी देता है। उक्त संस्थान का स्वास्थ्य भौतिकी केंद्र देश भर में विकिरण क्षेत्र में काम करने वालों के स्वास्थ्य की देखभाल भी करता है। मुंबई स्थित विकिरण औषधि केंद्र रोगों का पता लगाने और रोगोपचार के लिए रेडियो आइसोटोपों का उपयोग भी करता है। परमाणु नीतियों के कार्यान्वयन के लिए 1954 में परमाणु ऊर्जा विभाग (Deptt. of Atomic Energy - DAE) की स्थापना की गई। परमाणु ऊर्जा विभाग परमाणु एवं सम्बद्ध विज्ञानों के क्षेत्र में बुनियादी शोध के लिए कई संस्थानों को वित्तीय सहायता देता है। विभाग के कार्यों को अनुसंधान एवं विकास, परमाणु विद्युत उत्पादन तथा उद्योग एवं खनिज अनुसंधान में वर्गीकृत किया जा सकता है। देश के विभिन्न संस्थानों में चल रहे शोध कार्यों की देख-रेख एवं समन्वयन का कार्य विभाग करता है।

अनुसंधान रिएक्टरों की स्थापना

अनुसंधान रिएक्टरों (Research Reactors) के अभिकल्पन से लेकर उनके निर्माण एवं संचालन के सभी चरणों के निष्पादन की दिशा में भारत ने पूर्ण आत्मनिर्भरता हासिल कर ली है।

अप्सरा : भारत के 1 मेगावाट क्षमता का तरण ताल किस्म का रिएक्टर 'अप्सरा' 1956 में निर्मित हुआ था। यह पूर्णतः स्वदेशी रिएक्टर है। ईंधन के रूप में इसमें प्राकृतिक यूरेनियम का प्रयोग किया जाता है।

साइरस : 40 मेगावाट क्षमता वाले भारत के दूसरे रिएक्टर 'साइरस' (Canada-India Reactor Utility Service - CIRUS) की स्थापना 1960 में हुई थी। यह कनाडा के सहयोग से निर्मित किया गया था। यह संसार भर में अपने तरह के सबसे बड़े रिएक्टरों में से एक है। इसने पूर्ण क्षमता 1963 में अर्जित की थी। इसमें ईंधन के रूप में प्राकृतिक यूरेनियम तथा मंदक के रूप में भारी पानी और शीतक के रूप में हल्के पानी का इस्तेमाल किया जाता है। महत्वपूर्ण आइसोटोपों के उत्पादन के अतिरिक्त परीक्षण तथा प्रशिक्षण संबंधी सुविधाएं भी इस रिएक्टर ने हमें प्रदान किया है।

जरलीना : अत्यंत अल्प ऊर्जा (100 वाट क्षमता) वाले रिएक्टर 'जरलीना' की स्थापना 1961 में हुई थी। यह पूर्णतः स्वदेशी रिएक्टर है। इससे विभिन्न प्रकार के परमाण्विक ईंधनों के गुणों एवं ज्यामितियों के अध्ययन तथा रिएक्टर क्रोडों (Cores) के परीक्षण में मदद मिलती है।

पूर्णिमा : 'पूर्णिमा' का अभिकल्पन और निर्माण भारतीय वैज्ञानिकों ने 1972 में किया। फास्ट रिएक्टरों के क्षेत्र में परीक्षण हेतु शून्य ऊर्जा वाले 'पूर्णिमा' रिएक्टर की स्थापना की गई थी। इसमें थोड़े सुधार परिवर्तन के बाद इस श्रेणी के अगले रिएक्टर 'पूर्णिमा-II' का निर्माण किया गया जो 10 मई, 1984 को क्रिटिकल हुआ। 'पूर्णिमा-III' 1990 में क्रिटिकल हुआ। ईंधन के रूप में यूरेनियम-233 प्रयुक्त करने वाला संसार का प्रथम रिएक्टर पूर्णिमा ही है। पूर्णिमा से प्राप्त अनुभवों से यूरेनियम-233 से बने ईंधन पर आधारित 'कामिनी' नामक न्यूट्रान सोर्स रिएक्टर की डिजाइन में मदद मिली है जिसकी स्थापना रिएक्टर अनुसंधान केंद्र, कलपक्कम में की जा चुकी है। अब 'पूर्णिमा' श्रृंखला के रिएक्टरों को बंद

कर दिया गया है।

ध्रुव : 7-8 अगस्त, 1985 को भारत का उच्च अभिवाह (Flux) रिएक्टर 'ध्रुव' भी क्रिटिकल हो गया। 100 मेगावाट क्षमता वाले रिएक्टर 'ध्रुव' की स्थापना से आइसोटोपों के उत्पादन में और वृद्धि हुई है। अप्सरा में फास्फोरस, सोना, सल्फर, क्रोमियम तथा 'साइरस' में भी इसी तरह के लगभग 100 आइसोटोपों का निर्माण होता है। 'ध्रुव' में आयोडीन-131, क्रोमियम-51, मालिब्डेनम-99 के उत्पादन के अतिरिक्त आयोडीन-125 का भी उत्पादन हो रहा है जो अभी तक हमें विदेशों से मंगाना पड़ता था। यह प्रतिवर्ष 30 कि.ग्रा. प्लूटोनियम का भी उत्पादन करता है जो दूसरी पीढ़ी के तीव्र प्रजनक रिएक्टर (Fast Breeder Test Reactors-FBTR) के लिए ईंधन का कार्य करता है। 'ध्रुव' की स्थापना के साथ ही भारत ने तीव्र प्रजनक तकनीक में भी सफलता अर्जित कर ली। 18 अक्टूबर, 1985 को प्लूटोनियम से चलने वाला दूसरे पीढ़ी का रिएक्टर, जिसे फास्ट ब्रीडर रिएक्टर (तीव्र प्रजनक परमाणु भट्टी) कहा जाता है, कलपक्कम (मद्रास) में सक्रिय हो गया।

तीव्र प्रजनक रिएक्टर

फास्ट ब्रीडर रिएक्टरों में यूरेनियम जैसे प्राथमिक ईंधनों की आवश्यकता नहीं पड़ती अपितु यूरेनियम से चलने वाले ताप रिएक्टरों (Thermal Reactors) में प्रयुक्त ईंधन से उत्पन्न प्लूटोनियम की आवश्यकता पड़ती है। फास्ट ब्रीडर रिएक्टर की एक और विशेषता है, वह यह कि यह जितना ईंधन जलाता है, उससे कहीं अधिक ईंधन उत्पादित करता है।

विश्व का सर्वप्रथम न्यूट्रान सोर्स रिएक्टर 'कामिनी' की स्थापना इंदिरा गांधी अनुसंधान केंद्र में की गई है जो 28 अक्टूबर, 1996 को क्रिटिकल हो गया है। 30 किलोवाट क्षमता वाला यह रिएक्टर थोरियम चक्र पर आधारित है। इसमें ईंधन के रूप में U-233 का इस्तेमाल किया जा रहा है। यह भी जितना ईंधन जलाता है उससे कहीं अधिक ईंधन उत्पन्न करता है।

ध्रुव द्वारा निर्मित प्लूटोनियम द्वितीय पीढ़ी के तीव्र गति वाले ब्रीडर रिएक्टर (जो कलपक्कम में सक्रिय हो चुका है) के लिए अत्यंत उपयोगी है। कलपक्कम स्थित संस्थान अब 'इंदिरा गांधी परमाणु अनुसंधान केंद्र' के नाम से विख्यात है। इस केंद्र की स्थापना 1971 में की गई थी। उक्त केंद्र ने 1985 में जिस फास्ट ब्रीडर रिएक्टर का विकास किया है, उसकी क्षमता 40 मेगावाट है, सोडियम से शीतलीकृत उक्त रिएक्टर ने 18 अक्टूबर, 1985 से कार्य करना आरंभ कर दिया है। इस रिएक्टर से प्राप्त अनुभव के आधार पर इंदिरा गांधी परमाणु अनुसंधान केंद्र ने 500 मेगावाट क्षमता के प्रोटोटाइप रिएक्टर का डिजाइन तैयार किया है। उक्त केंद्र में धातुकी, रेडियो केमिस्ट्री और फास्ट रिएक्टर ईंधन के संसाधन के लिए आधुनिक प्रयोगशालाओं की सुविधाएं विद्यमान हैं।

न्यूट्रान सोर्स रिएक्टर 'कामिनी'

विश्व का सर्वप्रथम न्यूट्रान सोर्स रिएक्टर 'कामिनी' (Kalapakkam Mini Reactor- KAMINI) की स्थापना इंदिरा गांधी अनुसंधान केंद्र में की गई है जो 28 अक्टूबर, 1996 को क्रिटिकल हो गया है। 30 किलोवाट क्षमता वाला यह रिएक्टर थोरियम चक्र पर आधारित है। इसमें ईंधन के रूप में U-233 का इस्तेमाल किया जा रहा है। यह भी जितना ईंधन जलाता है उससे कहीं अधिक ईंधन उत्पन्न करता है। रिएक्टर क्रोड के चारों ओर थोरियम-232 की परतों का इस्तेमाल किया जाता है जो यूरेनियम-233 में परिवर्तित हो जाता है। यह यूरेनियम-233 इसी कोटि के अन्य रिएक्टरों के लिए अच्छी ईंधन सामग्री है।

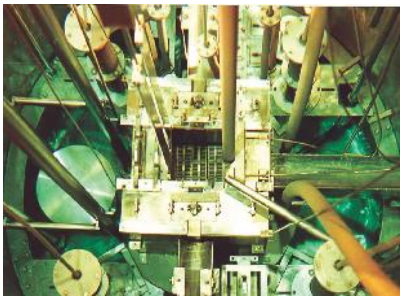

न्यूट्रॉन सोर्स रिएक्टर कामिनी

परमाणु विद्युत उत्पादन

देश में उपलब्ध यूरेनियम तथा थोरियम के भंडारों को देखते हुए इनके समुचित उपयोग को दृष्टिगत कर देश के कर्मठ परमाणु विज्ञानियों ने विगत शती के पांचवें दशक में ही परमाणु विद्युत उत्पादन की तीन चरणीय योजना बनायी थी।

1. पहले चरण में ऐसे रिएक्टरों की स्थापना करनी थी, जिसमें ईंधन के रूप में प्राकृतिक यूरेनियम का उपयोग किया जाना था। ऐसे रिएक्टरों में विद्युत उत्पादन के

साथ-साथ उत्पाद के रूप में प्लूटोनियम भी मिलता है।

2. दूसरे चरण में ऐसे रिएक्टरों के स्थापित करने की योजना थी जिनमें प्लूटोनियम को ईंधन के रूप में प्रयुक्त किया जा सके। निस्संदेह यह परिकल्पना फास्ट ब्रीडर रिएक्टर की ही थी। ऐसे रिएक्टरों में विद्युत उत्पादन के साथ ही साथ यूरेनियम-238 से प्लूटोनियम-239 का और अधिक मात्रा में उत्पादन होगा तथा यूरेनियम-233 भी उत्पन्न होगा।

3. परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के तीसरे चरण में ऐसे रिएक्टरों के स्थापित करने की योजना बनाई गयी थी, जो थोरियम चक्र पर आधारित होगा। इन रिएक्टरों में जितना यूरेनियम-233 जलेगा, उससे कहीं अधिक मात्रा में उत्पन्न होगा।

इस तीन चरणीय योजना का दो हिस्सा भारत पूरा कर चुका है। इस समय भारत में जितनी ताप भट्टियां (Thermal Power Reactors) हैं, वे उच्च दाब वाले भारी पानी किस्म के रिएक्टर हैं और इनमें ईंधन के रूप में प्राकृतिक यूरेनियम का इस्तेमाल किया जाता है।

ताप रिएक्टरों में प्रयुक्त ईंधन को जब संसाधित किया जाता है तो उससे प्लूटोनियम मिलता है, इसे फास्ट ब्रीडर रिएक्टरों में इस्तेमाल किया जायेगा। ब्रीडर रिएक्टर अस्तित्व में आ चुके हैं।

ब्रीडर रिएक्टरों में प्रयुक्त ईंधन को थोरियम के आवरण में फिर से संसाधित करने से और अधिक प्लूटोनियम तथा यूरेनियम-233 मिलेगा। तीसरी पीढ़ी के रिएक्टरों में थोरियम चक्र में यूरेनियम-233 का इस्तेमाल किया जायेगा।

भारत के परमाणु विद्युत का उत्पादन 1969 में आरंभ हुआ, जब तारापुर परमाणु बिजली घर (महाराष्ट्र) सक्रिय हुआ था। तारापुर में 4 रिएक्टरों की स्थापना की गई है जिनमें से दो 'बॉयलिंग वाटर' रिएक्टर हैं और शेष दो दाबित भारी पानी पर आधारित हैं।

रावतभाटा (राजस्थान) में 6 यूनिटें स्थापित हैं। कलपक्कम (मद्रास) में 2 यूनिटें, नरोरा (बुलंदशहर, उ.प्र.) में 2 यूनिटें, ककरापार (गुजरात) में 2 यूनिटें, कैगा (कर्नाटक) में 4 यूनिटें कार्यरत हैं। रूसी सहयोग से कुदनकुलम (तमिलनाडु) में एक-एक हजार मेगावाट क्षमता के दो रिएक्टरों की स्थापना की जा चुकी है।

कुदनकुलम की पहली यूनिट ने 7 जून, 2014 को क्रांतिकता प्राप्त की थी और दूसरी यूनिट भी 10 अगस्त, 2016 को सक्रिय हो गई।

भारत में 22 रिएक्टरों की स्थापना हो चुकी है जिनमें से 21 रिएक्टर परमाणु विद्युत जनन कर रहे हैं क्योंकि रावतभाटा (राजस्थान) की 100 मेगावाट क्षमता वाली पहली यूनिट को स्थायी रूप से बंद कर दिया गया है। इस प्रकार देश भर के सभी परमाणु बिजलीघरों की परमाणु विद्युत जनन क्षमता 6680 मेगावाट हो गई है जो देश भर के समग्र विद्युत उत्पादन का मात्र 3 प्रतिशत है।

भारत में 22 रिएक्टरों की स्थापना हो चुकी है जिनमें से 21 रिएक्टर परमाणु विद्युत जनन कर रहे हैं क्योंकि रावतभाटा (राजस्थान) की 100 मेगावाट क्षमता वाली पहली यूनिट को स्थायी रूप से बंद कर दिया गया है। इस प्रकार देश भर के सभी परमाणु बिजलीघरों की परमाणु विद्युत जनन क्षमता 6680 मेगावाट हो गई है जो देश भर के समग्र विद्युत उत्पादन का मात्र 3 प्रतिशत है।

परमाणु ऊर्जा के संदर्भ में सबसे प्रबल पक्ष यह है कि यह ऊर्जा का स्वच्छ स्रोत है अर्थात् इसमें से कोई भी हरित गृह गैस (Green House Gas) नहीं निकलती है, फिर भी निरापद नहीं है परमाणु ऊर्जा। इसकी चर्चा हम आगामी अंकों में करेंगे।

sdprasad24oct@yahoo.com

भविष्य की प्रभावी प्रौद्योगिकी

नैनो भौतिकी

डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र

डॉ.कृष्ण कुमार मिश्र ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से रसायन विज्ञान में पीएच-डी. की उपाधि प्राप्त की। आप टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान मुंबई के होमी भाभा विज्ञान केन्द्र में रीडर हैं। लोकप्रिय विज्ञान लेखक के रूप में आपकी अपार ख्याति है जोकि हिन्दी में आपके व्यापक लेखन से निर्मित हुई है। आपके 250 से अधिक लेख तथा 22 पुस्तकें प्रकाशित हैं। राजभाषा गौरव पुरस्कार, होमी जहाँगीर भाभा स्वर्ण पुरस्कार, शताब्दी सम्मान, राजभाषा भूषण सम्मान, इस्वा सम्मान सहित अनेक पुरस्कारों से सम्मानित डॉ.मिश्र मुंबई में निवास करते हैं।

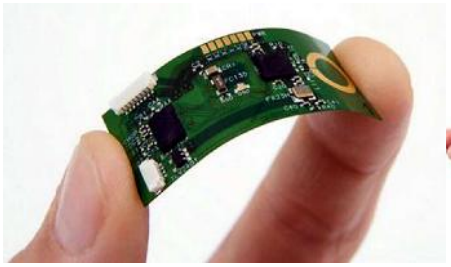

विज्ञान तथा तकनीकी की दुनिया में नैनोप्रौद्योगिकी की हर जगह चर्चा है। यह छोटे स्केल पर पदार्थ के अनुप्रयोग पर केंद्रित तकनीक है। इसमें नैनोभौतिकी भी एक महत्वपूर्ण विधा है। नैनोभौतिकी के अन्तर्गत नैनोइलेक्ट्रॉनिकी, नैनोप्रकाशिकी, कार्बन नैनोट्यूब, नैनोचुम्बकत्व, क्वाण्टम ट्रांसपोर्ट, नैनोयांत्रिकी तथा नैनो कणों के विषय में प्रमुखता से अध्ययन किया जाता है। नैनोभौतिकी को "नैनोमीटर परास (रेंज) की माप की संरचनाओं तथा कलाकृतियों अथवा नैनोसेकेण्ड में पूर्ण होने वाली घटनाओं के भौतिक विज्ञान" के रूप में परिभाषित किया जाता है। अगर साधारण भाषा में कहा जाये तो नैनोभौतिकी अत्यन्त सूक्ष्म वस्तुओं की संरचना, निर्माण तथा उनके अनुप्रयोग के अध्ययन की विधा है। इसका विज्ञान की दूसरी अन्यान्य शाखाओं (जैसे- रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान, पदार्थ विज्ञान आदि) तथा प्रौद्योगिकियों में व्यापक उपयोग होता है। वैसे तो एक विषय के तौर पर भौतिकी का क्षेत्र काफी व्यापक है लेकिन इक्कीसवीं सदी में नैनोभौतिकी को सबसे तेज उभरते हुए क्षेत्र के रूप में देखा जा रहा है। वर्तमान में भौतिकीविदों का रुझान इस तरफ तेजी से बढ़ रहा है। "द्विविमीय तात्विक पदार्थ ग्रेफीन के बारे में अभूतपूर्व प्रयोगों के लिए आंद्रे जीम और कॉन्स्टेंटिन नोवोसेलोव को संयुक्त रूप से सन् 2010 में भौतिकी के 'नोबेल पुरस्कार' से सम्मानित किया जा चुका है। नैनोभौतिकी के अन्तर्गत अनुशीलन के कुछ प्रमुख विषयों की चर्चा नीचे की गई है।

नैनो इलेक्ट्रॉनिकी

नैनो इलेक्ट्रॉनिकी को नैनो भौतिकी की महत्वपूर्ण शाखा माना जाता है। इसके अन्तर्गत इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में नैनो तकनीकी के उपयोग के बारे में अध्ययन किया जाता हैं। इलेक्ट्रॉनिकी का बुनियादी सिद्धान्त ही है कि "किसी युक्ति का आकार चाहे जो हो, उसे और छोटा कीजिए।" साथ ही किसी युक्ति की दक्षता चाहे जो हो, उसे और बढ़ाइए। इसी सिद्धान्त का अनुपालन करते हुए, आजकल अधिकांश इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के निर्माण में नैनो तकनीकी से निर्मित नैनो आकार की वस्तुओं का उपयोग प्राथमिकता से किया जा रहा हैं। कम्प्यूटर, टेलीविजन, मोबाइल तथा अन्य इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के निर्माण में नैनो प्रौद्योगिकी का प्रयोग तेजी से बढ़ रहा हैं।

नैनो इलेक्ट्रॉनिकी के द्वारा उपकरणों की माप तथा आकार को कम करने में मदद मिलती है। इसकी सहायता से अर्द्धचालकों के विशिष्ट गुणों को ज्ञात किया जा सकता हैं। वर्तमान में सिलिकॉन अर्द्धचालक का उपयोग प्रमुखता से किया जा रहा हैं। आजकल डाटा स्टोरेज के लिए कम्प्यूटर तथा मोबाइल में 'इलेक्ट्रॉनिक नैनो चिप' का उपयोग किया जाता है, जो नैनो इलेक्ट्रॉनिकी की ही देन है। एक इलेक्ट्रॉनिक नैनो चिप में लगभग दस लाख सिलिकॉन युक्तियां होती हैं तथा प्रत्येक युक्ति का आकार लगभग 500 नैनोमीटर (1 नैनोमीटर= 10^{-9} मीटर) होता है। आशा है कि अगले कुछ दशकों में इसका आकार सिमट कर 1-10 नैनोमीटर तक हो जायेगा। कम्प्यूटर तथा अन्य इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की

आने वाले समय में सिलिकॉन के स्थान पर ग्रेफीन की कम्प्यूटर चिप का उपयोग किया जायेगा। इससे उनका आकार और अधिक छोटा होगा तथा क्षमता कई गुना अधिक बढ़ जायेगी। ग्रेफीन में इलेक्ट्रॉन की गति सिलिकॉन की तुलना में 100-1000 गुना ज्यादा होती है। ग्रेफीन से निर्मित ट्रांजिस्टर उच्च तापमान पर भी तीव्र गति से कार्य करते है।

क्षमता में वृद्धि अधिक से अधिक ट्रांजिस्टर को एकीकृत परिपथ (इंटिग्रेटेड सर्किट) में समाहित करके किया जाता है। वर्तमान में 200 से 300 नैनोमीटर आकार के ट्रांजिस्टरों का उपयोग परिपथों में किया जाता है। आने वाले समय में सिलिकॉन के स्थान पर ग्रेफीन की कम्प्यूटर चिप का उपयोग किया जायेगा। इससे उनका आकार और अधिक छोटा होगा तथा क्षमता कई गुना अधिक बढ़ जायेगी। ग्रेफीन में इलेक्ट्रॉन की गति सिलिकॉन की तुलना में 100-1000 गुना ज्यादा होती है। ग्रेफीन से निर्मित ट्रांजिस्टर उच्च तापमान पर भी तीव्र गति से कार्य करते है। चूँकि ग्रेफीन की संरचना द्विआयामी होती है, इसलिए सिलिकॉन की तुलना में इससे कहीं अधिक सूक्ष्म चिप तैयार करना संभव हैं। सौर बैटरियों, लाइट पैनलों तथा टचस्क्रीन के लिए ग्रेफीन ज्यादा युक्तिसंगत होगा। उपग्रहों, कारों तथा हवाई जहाजों में भी कंपोजिट मैटीरियल के तौर पर ग्रेफीन का उपयोग हो सकेगा। इस प्रकार कहा जा सकता है कि नैनो इलेक्ट्रॉनिकी के क्षेत्र का दायरा दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। वर्तमान में इस तकनीकी का उपयोग करके तरह-तरह के इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का विकास किया जा रहा है।

कार्बन नैनोट्यूब

कार्बन नैनोट्यूब की संरचना बेलनाकार होती है। यह कार्बन का एक अपररूप है। इस आश्चर्यजनक संरचना के कार्बन नैनोट्यूब के अन्दर कई प्रकार के आकर्षक इलेक्ट्रॉनिक, चुंबकीय तथा यांत्रिक गुण होते हैं। कार्बन नैनोट्यूब, स्टील से लगभग 100 गुना ज्यादा मजबूत होते हैं। इनकी अलग-अलग लम्बाई, मोटाई तथा परतों की संख्या की अनेक संरचनाएँ होती हैं। कार्बन नैनोट्यूब फुलरीन संरचनात्मक परिवार का सदस्य है जिसमें गोलाकार 'बकीबॉल' भी शामिल है। एक नैनोट्यूब के छोर को बकीबॉल संरचना के एक गोलार्द्ध के साथ ढका जा सकता है। उनका नाम उनके आकार से लिया गया है। चूंकि एक नैनोट्यूब का व्यास कुछ नैनोमीटर के क्रम में (एक मानव केश की मोटाई का लगभग 1/50,000 वाँ हिस्सा) होता है, जबकि लंबाई में वह कई मिलीमीटर हो सकता है। नैनोट्यूब को एकल-दीवार नैनोट्यूब (Single Walled Carbon Nanotubes (SWNTs)) और बहु-दीवार नैनोट्यूब (Multi&walled carbon nanotubes (MWNTs)) के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। एकल-दीवार नैनोट्यूब, कार्बन नैनोट्यूब के एक महत्वपूर्ण प्रकार हैं क्योंकि ये ऐसा विद्युत गुण प्रदर्शित करते हैं जो बहु-दीवार कार्बन नैनोट्यूब में नहीं पाया जाता है। अधिकांश एकल-दीवार नैनोट्यूब का व्यास करीब एक नैनोमीटर होता है, वही ट्यूब की लंबाई कई लाख गुना तक हो सकती है। एकल-दीवार नैनोट्यूब, सूक्ष्म इलेक्ट्रॉनिक्स के लिए सबसे अधिक उपयुक्त हैं, इसका सबसे अधिक उपयोग बिजली का तार तैयार करने में होता है। बहु-दीवार नैनोट्यूब ग्रेफाइट के कई घुमावदार परतों से मिलकर बने होते हैं। इसका वर्णन करने के लिए दो मॉडलों का वर्णन किया जाता हैं। पहला रसियन डौल मॉडल, जिसमें ग्रेफाइट की चादरें संघनित सिलिंडरों के रूप में होती हैं तथा दूसरा पार्चमेंट मॉडल, जिसमें ग्रेफाइट की एक चादर अपने आप में पार्चमेंट के चिट्ठे या एक गोलाकार लपेटे अखबार की तरह धूमी हुई होती हैं। बहु-दीवार नैनोट्यूब में आतंरिक परतों के बीच की दूरी, ग्रेफाइट में ग्रेफीन परतों के बीच की दूरी (लगभग 3.3Å) के आसपास होती है।

नैनोप्रकाशिकी

नैनोप्रकाशिकी, प्रकाशिकी की एक शाखा है जिसके अन्तर्गत नैनोमीटर आकार की वस्तुओं के प्रकाश के साथ व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। यह नैनो विज्ञान तथा नैनो प्रौद्योगिकी से प्रेरित एक तेजी से उभरता हुआ क्षेत्र है। सामान्य प्रकाशिक उपकरणों जैसे कि लेंस तथा सूक्ष्मदर्शी की सहायता से विवर्तन की सीमा के कारण प्रकाश को सामान्यतया नैनोमीटर आकार की वस्तु पर फोकस नहीं कराया जा सकता है। फिर भी, दूसरी तकनीकों का उपयोग करके प्रकाश को नैनो आकार की वस्तुओं पर अधिसंकुचित करना संभव है। इस तकनीकी का उपयोग स्कैनिंग नीअर-फील्ड (नजदीकी सतह) माइक्रोस्कोपी, फोटोऐसिस्टेड स्कैनिंग (क्रमवीक्षण) टनलिंग माइक्रोस्कोपी तथा सतह प्लाज्मॉन प्रकाशिकी में प्रमुखता से किया जाता है।

नैनो कण

नैनोभौतिकी के अन्तर्गत नैनो कणों के विषय में भी अध्ययन एवं शोध-कार्य किया जाता है। नैनो कणों का आकार एक नैनोमीटर से सौ नैनोमीटर तक होता हैं। नैनो कणों पर किये जा रहे वैज्ञानिक अनुसंधानों से पता चला है कि चिकित्सा, प्रकाशिकी तथा इलेक्ट्रॉनिक्स में

इनके उपयोग की अपार संभावनाएं हैं। नैनो कण स्वतंत्र अवस्था में तेजी से गतिमान होते हैं तथा इनका विशिष्ट पृष्ठीय क्षेत्रफल अधिक होता है। नैनो कणों के पास उनके सूक्ष्म आकार के कारण अनेक अद्वितीय गुण पाये जाते हैं। इनके इन्ही विशिष्ट गुणों का उपयोग करके आधुनिक टायर का निर्माण किया जाता है, जिसका उपयोग वाहनों में व्यापक स्तर पर हो रहा है। आधुनिक टायर रबर(प्रत्यास्थ बहुलक) तथा अकार्बनिक पूरकों (सिलिका नैनों कण अथवा कार्बन ब्लैक) को मिलाकर किया जाता है। नैनो कणों का सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण अर्द्धचालक नैनोकण क्वाण्टम डॉट है। यह अत्यधिक छोटा कण है जिसके प्रकाशिक तथा वैद्युत गुण बडे कणों से भिन्न होते हैं। क्वाण्टम डॉट बड़े तथा असतत् अणुओं के बीच मध्यवर्ती का गुण प्रदर्शित करते हैं। ट्यून करने योग्य गुणधर्म प्रदर्शित करने के कारण क्वाण्टम डॉट का विभिन्न उपकरणों जैसे कि ट्रांजिस्टर, सोलर सेल, एलईडी, डायोड लेजर, क्वाण्टम कम्प्यूटिंग तथा मेडिकल इमेजिंग में बड़े पैमाने पर उपयोग होता है।

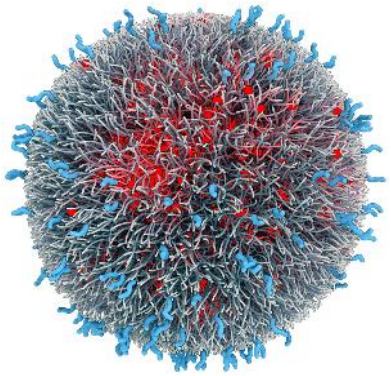

नैनो कणों का सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण अर्द्धचालक नैनोकण क्वाण्टम डॉट है। यह अत्यधिक छोटा कण है जिसके प्रकाशिक तथा वैद्युत गुण बडे कणों से भिन्न होते हैं। क्वाण्टम डॉट बड़े तथा असतत् अणुओं के बीच मध्यवर्ती का गुण प्रदर्शित करते हैं। ट्यून करने योग्य गुणधर्म प्रदर्शित करने के कारण क्वाण्टम डॉट का विभिन्न उपकरणों जैसे कि ट्रांजिस्टर, सोलर सेल, एलईडी, डायोड लेजर, क्वाण्टम कम्प्युटिंग तथा मेडिकल इमेजिंग में बड़े पैमाने पर उपयोग होता है।

नैनो यांत्रिकी

नैनो यांत्रिकी, नैनो भौतिकी की वह शाखा है जिसके अन्तर्गत नैनो पैमाने की वस्तुओं के यांत्रिक गुणों (प्रत्यास्थता, ऊष्मा तथा गति आदि) का अध्ययन किया जाता है। नैनो यांत्रिकी के द्वारा नैनो प्रौद्योगिकी को वैज्ञानिक आधार प्रदान किया जाता है। आधारभूत विज्ञान के रूप में नैनो यांत्रिकी कुछ अनुभवसिद्ध प्रयोगों पर आधारित है, दूसरे शब्दों में कहा जाय, तो नैनो यांत्रिकी अनेक तत्वों के औद्योगिक तथा व्यावसायिक उपयोग के लिए उनके यांत्रिक गुणों का तकनीकी अध्ययन है। यह यांत्रिक इंजन तथा इलेक्ट्रॉनिक मोटर का आकार तथा भार कम करने में मदद करती है। नैनोयांत्रिकी आधुनिक यांत्रिकी तथा अत्यधिक छोटे यांत्रिक उपकरणों के विकास को प्रोत्साहित करती है। आजकल सड़कों पर दौड़ने वाली नैनो कार इसका सबसे अच्छा उदाहरण है। नैनोयांत्रिक सिस्टम को कम बजट में नहीं चलाया जा सकता है। इसके लिए अधिक बजट की आवश्यकता होती है। नैनोयांत्रिक तकनीक पर आधारित मशीनें एवं उपकरण साधारण यांत्रिक मशीनों तथा उपकरणों की तुलना में कई गुना महँगे होते हैं। नैनो कणों और रासायनिक क्रियाओं के साथ ज्यादा उद्रासन स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है।

मेन्ब्रेन नैनो यांत्रिकी का प्रचलन तेजी से बढ़ रहा है। नैनोमेम्ब्रेन को सुविधा अनुसार किसी भी आकार में परिवर्तित किया जा सकता है, इसीलिए विभिन्न आधुनिक यांत्रिक प्रणाली में नैनोमेम्ब्रेन का उपयोग हो रहा है। आजकल वॉटर प्यूरीफायर में भी नैनोमेम्ब्रेन का उपयोग किया जाता है। इन मेम्ब्रेन्स की सहायता से जल में उपस्थित अतिसूक्ष्म हानिकारक कणों को भी जल से पृथक किया जा सकता हैं।

नैनो चुम्बकत्व

नैनोचुम्बकत्व, नैनोभौतिकी का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। इसमें नैनो आकार की वस्तुओं के चुम्बकीय गुणों का अध्ययन किया जाता है। नैनोचुम्बक के आकार के कारण बहुत से वैद्युत गुणों में वृद्धि होती है जैसे कि चालन में इलेक्ट्रॉनों का विश्राम काल बढ़ जाता है जो नैनो आकार के स्पिनट्रॉनिक उपकरणों के लिए अत्यधिक उपयोगी होता है। उच्च तापमान पर चुम्बकीकरण में ये अत्यधिक ऊष्मीय उतार-चढ़ाव से होकर गुजरते हैं जो नैनो चुम्बक के परमानेन्ट इन्फार्मेशन स्टोरेज में उपयोग के लिए एक स्तर निर्धारित करता है। इस प्रकार नैनो चुम्बक इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के लिए अत्यधिक उपयोगी है।

उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट है कि नैनोभौतिकी आज एक तेजी से उभरता हुआ अनुशीलन क्षेत्र है। इस विधा में अनुसंधान तथा विकास की अपार संभावनाएं निहित हैं। स्वास्थ्य, चिकित्सा, रक्षा अनुसंधान, सौर ऊर्जा तथा इलेक्ट्रानिक उपकरणों में नैनोभौतिकी से प्रेरित नैनोतकनीक का उपयोग निरंतर बढ़ रहा है। इसलिए प्रायः कहा जाता है कि आने वाला तकनीकी युग नैनोतकनीकी का होगा तथा इसमें नैनोभौतिकी की बड़ी ही अहम भूमिका होगी।

kkm@hbcse.tifr.res.in

पसीना क्यों और कैसे आता है?

सुभाष चंद्र लखेड़ा

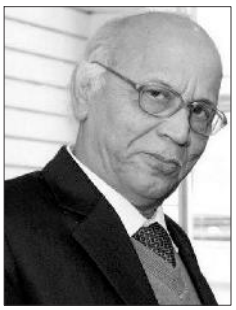

रक्षा शरीरक्रिया एवं संबद्ध विज्ञान संस्थान (डिपास), डीआरडीओ से वरिष्ठ वैज्ञानिक के पद से सेवानिवृत सुभाष चंद्र लखेड़ा लोकप्रिय विज्ञान लेखक और बेबाक वक्ता हैं। डिजिटल मंचों पर वे पिछले कुछ वर्षों से अपने यात्रा संस्मरणों को समय-समय पर लिखते रहे हैं। ये संस्मरण वैज्ञानिक आधार पर इतने खरे उतरते हैं कि पाठकों ने इसे एक नई विधा का स्वरूप मान लिया। सुभाष चंद्र लखेड़ा हार्डकोर विज्ञान संबंधी शोध के समानान्तर आम जन को विज्ञान की गूढ़ बातें सरल भाषा में साझा करते आये हैं। आप दिल्ली में रहते हैं।

हमें पसीना आता है- इस तथ्य से मनुष्य प्राचीन काल से परिचित था किन्तु उसे यह स्पष्ट मालूम नहीं था कि पसीना क्यों और कैसे आता है? बहरहाल, उपलब्ध प्रमाणों से पता चलता है कि मानव की शारीरिक त्वचा में मौजूद एक्क्राइन स्वेद छिद्रों को सर्वप्रथम आज से लगभग पच्चीस सौ वर्ष पहले यूनान के दार्शनिक-विचारक एपेडोक्लीस (Empedocles, 495 BC - 435 BC) ने देखा था। बहरहाल, पसीना संबंधी प्रक्रिया को समझने के ठोस प्रयास सत्रहवीं सदी में शुरू हुए। इस दौरान अनेक चिकिसकों ने त्वचा में मौजूद स्वेद (पसीना) ग्रंथियों के उन छिद्रों को पहचाना जिनसे पसीना निकलता है। आधुनिक काल में इटली के मारचेल्लो मलपीघी (Marcello Malpighi, 1628-1694) ऐसे प्रथम शरीरक्रिया वैज्ञानिक थे जिन्हें एक्क्राइन स्वेद छिद्रों को पहचानने का श्रेय दिया जाता है। सन् 1684 में ब्रिटिश सूक्ष्मदर्शिक (माइक्रोस्कॉपिस्ट) नेहमाय ग्रीउ (Nehemiah Grew,1641-1712) ने पैरों और हाथों की एपिडर्मल लकीरें और स्वेद छिद्रों का वर्णन किया। उनके बाद सन् 1632 में जन्मे नीदरलैंड के सूक्ष्मजीव विज्ञानी ऐंटोनी वैन लीवेनहक (Antonie van Leeuwenhoek,1632-1723) ने पसीने का स्राव करने वाली ग्रंथियों का अध्ययन किया लेकिन अभी पसीना आने की प्रक्रिया वैज्ञानिकों के लिए एक अबूझ पहेली थी।

आखिकार, सन् 1833 में तत्कालीन चेक गणराज्य के शरीरक्रिया वैज्ञानिक यान इवैनजेलिस्टा परकेनिये (Jan Evangelista Purkinje, 1787-1869) ने वास्तविक स्वेद ग्रंथियों को खोज लिया। ये वही परकेनिये थे जिन्होंने हृद्पेशी की अंदरूनी हिस्सों (सबएन्डोकार्डीअम) में जिलेटिन जैसे तंतुओं के उस जाल को खोजा जिन्हें उनके नाम से 'परकेनिये फाइबर्स' कहा जाता है। सन् 1843 में जर्मन शरीर-रचना विज्ञानी कार्ल क्राउस (Karl Krause,1797-1868) ने बताया कि हमारे शारीरिक हिस्सों की त्वचा में स्वेद ग्रंथियों की संख्या अलग-अलग होती है। उनके बाद सन् 1887 में फ्रांस के ऊतक विज्ञानी लुइस एन्तोइन रनवीआई (Louis Antoine Ranvier, 1835-1922) ने त्वचा में पूर्णस्रावी (होलोक्राइन) और अंशस्रावी (मेरोक्राइन) ग्रंथियों के मौजूद होने की बात कही। पूर्णस्रावी ग्रंथियां तैलीय होती हैं और अंशस्रावी ग्रंथियां त्वचा में पसीने का स्राव करती हैं। लगभग तीन दशक बाद सन् 1917 में जर्मन त्वचा ऊतक वैज्ञानिक पी शीफ़ाडिका (P-Schieferdicker) ने अंशस्रावी ग्रंथियों को एक्क्राइन और एपोक्राइन नामक दो भागों में विभाजित किया गया। तत्पश्चात, सन् 1987 में जापानी वैज्ञानिक केन्जो सातो (Kenzo Sato) ने मार्शल डर्मेटोलॉजी रिसर्च लैबोरेट्रीज, यूनिवर्सिटी ऑफ आयोवा (अमेरिका) में अपने कार्यकाल के दौरान त्वचा में पसीने से जुड़ी तीसरी संकर ग्रंथि होने का प्रमाण दिया। इसके मिश्रित गुणधर्म को देखते हुए इसे एपोएक्क्राइन नाम दिया गया।

सातो ने अपने अध्ययनों के आधार पर बताया कि वयस्क मनुष्य के संपूर्ण शारीरिक त्वचा में बीस लाख से लेकर पैंतीस लाख तक स्वेद ग्रंथियां होती हैं और इन सभी स्वेद ग्रंथियों का कुल भार लगभग सौ ग्राम होता है। सातो के अनुसार सर्वाधिक स्वेद ग्रंथियां वयस्क मनुष्य के पैरों के तलुओं में होती हैं। तलुओं में स्वेद ग्रंथियों की संख्या औसतन 620 प्रति वर्ग सेंटीमीटर होती है। सबसे कम स्वेद ग्रंथियां पीठ की त्वचा में होती हैं जहाँ इनकी संख्या औसतन प्रति वर्ग सेंटीमीटर 64 होती है। सन् 1892 में स्वीडन के शरीरक्रिया वैज्ञानिक महनुस गुस्ताफ ब्लिक्स (Magnus Gustaf Blix, 1849-1904) ने शारीरिक त्वचा में मौजूद ऊष्माग्राहियों (थर्मोरिसेप्टर्स) की खोज की। इसी दौरान जर्मन तंत्रिका विज्ञानी अल्फ्रेड गोलशायगा (Alfred Goldscheider,1858-1935) और जोहन्स हॉपकिंस यूनिवर्सिटी, अमेरिका के चिकित्सक हेनरी हर्बर्ट डोनाल्डसन (Henry Herbert Donaldson,1857-1938) ने भी स्वतंत्र रूप से त्वचा में ऐसे बिंदुओं की पुष्टि की जो गर्मी या शीतलता का अनुभव करने से ताल्लुक रखते हैं।

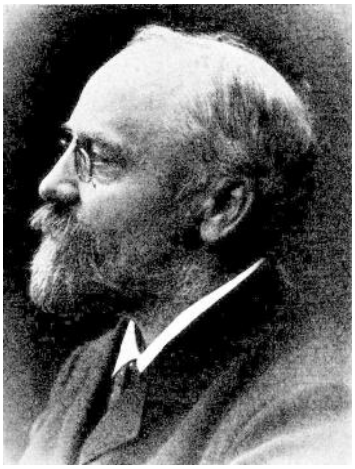

महनुस गुस्ताफ ब्लिक्स

सन् 1956 में जापानी वैज्ञानिक यस कूनो ने बताया कि स्वेद अनुक्रियाएं मुख्य रूप से केंद्रीय ताप - नियामक केंद्र द्वारा नियत्रित होती हैं। उनके बाद सन् 1959 में अमेरिकन - जर्मन शरीरक्रिया वैज्ञानिक थियोडो हनेस बेंसिगे (Theodor Hannes Benzinger, 1905-1999) ने सर्वप्रथम शरीर के आंतरिक तापमान और स्वेद दर के बीच संबंध होने की पुष्टि की। उनके अनुसार स्थिर अवस्था की दशाओं में मनुष्य में व्यायाम अथवा पर्यावरणीय तापमान की वजह से स्वेद दर में होने वाली वृद्धि और उसके कर्णपटह का तापमान घनिष्ठ रूप से सहसंबंधित रहते हैं। सन् 1965 में यूनिवर्सिटी ऑफ कोपेनहेगन, डेनमार्क के शरीरक्रिया विज्ञानी बोडल नीलसन और मैरीअस नीलसन (Bodil Nielsen-Marius Nielsen) ने अपने शोध पत्र में बेंसिगे की इस अवधारणा पर सहमति प्रकट की कि स्वेद दर में होने वाली वृद्धि और उसके कर्णपटह का तापमान घनिष्ठ रूप से सहसंबंधित हैं। अपने शोध के दौरान इन वैज्ञानिकों ने देखा कि पेशीय व्यायाम शुरू करने के कुछ मिनट बाद, व्यायाम के दौरान और उसकी समाप्ति के बाद 'स्वेद स्राव की दर' भोजन-नलिका और कर्णपटह के तापमान से सहसंबंधित रहता है। नीलसन और नीलसन के अनुसार शरीर के आंतरिक तापमान में बदलाव न होने के बावजूद त्वचीय तापमान में गिरावट होने पर उसी अनुपात में स्वेद स्राव की दर भी कम होती चली जाती है। उन्नीसवीं सदी की शुरूआत में यह ज्ञात हो गया था कि शरीर का मुख्य तापमान नियमन केंद्र मस्तिष्क के पूर्व-चाक्षुषीय अधश्चेतकीय (प्री-ऑप्टिक हाइपोथलेमिक) क्षेत्रों में स्थित है। पशुओं में किए अध्ययनों और मानव मस्तिष्क की संरचना संबंधी आंकड़ों से मालूम हुआ कि तापमान नियमन के अपवाही संकेत रीढ़ रज्जु से होते हुए परिधीय तंत्रिकाओं से संयुक्त होकर त्वचा में मौजूद स्वेद ग्रंथियों तक पहुँचते हैं। उन्नीसवीं सदी के सातवें-आठवें दशक के दौरान स्वेद स्राव दर में त्वचा तापमान और शरीर के आंतरिक तापमान की भूमिकाओं को समझने के लिए वैज्ञानिकों ने अनेक अध्ययन किए।

सन् 1971 में अमेरिका की येल यूनिवर्सिटी के चर्चित शरीरक्रिया वैज्ञानिक ईथन आर नेडल (Ethan R. Nadel, 1942-1999) और उनके सहयोगियों के 'जर्नल ऑफ एप्लाइड फिजियोलॉजी' में दो शोध पत्र प्रकाशित हुए। इन शोध पत्रों के अनुसार स्वेद स्राव की दर केंद्रीय ताप-नियामक केंद्र द्वारा नियत्रित होती है लेकिन इसको त्वचा का औसत तापमान भी प्रभावित करता है। सन् 1976 में 'जर्नल ऑफ एप्लाइड फिजियोलॉजी' के अंक 40 में छपे एक शोध पत्र के अनुसार पसीने का स्राव मुख्यतः मस्तिष्क के तापमान पर निर्भर करता है। इस शोध से संबंधित शरीरक्रिया वैज्ञानिक के.ए.स्माइल्स, आर.एस. ऐलिचोंदो और सी.सी.बार्नी ने अपने यह प्रयोग जिन रीसस बंदरों में किए, उन्होंने उन

सन् 1976 में 'जर्नल ऑफ एप्लाइड फिजियोलॉजी' के अंक 40 में छपे एक शोध पत्र के अनुसार पसीने का स्राव मुख्यतः मस्तिष्क कां तापमान पर निर्भर करता है। इस शोध से संबंधित शरीरक्रिया वैज्ञानिक के.ए.स्माइल्स, आर.एस. ऐलिचोंदो और सी.सी.बार्नी ने अपने यह प्रयोग जिन रीसस बंदरों में किए, उन्होंने उन बंदरों के मस्तिष्क के हिस्से अधश्चेतक (हाइपोथेलेमस) के तापमानों का प्रत्यक्ष रूप में मापन किया था।

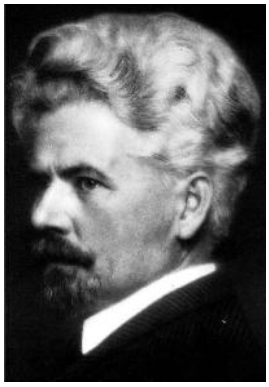

हेनरी हर्बर्ट डोनाल्डसन

कार्ल हैनहोल्ड अगुस्त वुंडरलिश

उन्नीसवीं सदी के अंतिम वर्षों में ब्रिटिश शरीरक्रिया वैज्ञानिक मारकस सिमोर पेम्ब्री और इटली के तांत्रिक विज्ञानी लुइजी लुचानी ने अपने समकालीन वैज्ञानिकों को यह कहकर भ्रमित कर दिया कि तापमान नियंत्रण केंद्र महज कल्पना की उपज है। उनका विचार था कि शारीरिक तापमान का नियंत्रण कोई केंद्र नहीं बल्कि प्रतिवर्ती क्रियाएं (रिफ्लेक्स एक्शन) करती हैं। इन प्रतिवर्ती क्रियाओं का संबंध किसी एक केंद्र के बजाय संपूर्ण तंत्रिका तंत्र से होता है।

प्रोफेसर आइजैक ओटीटी

बंदरों के मस्तिष्क के हिस्से अधश्चेतक (हाइपोथेलेमस) के तापमानों का प्रत्यक्ष रूप में मापन किया था।

बहरहाल, अठारहवीं सदी में वैज्ञानिकों को इस तथ्य का पता लग गया था कि मौसम के गरम या ठंडा होने के बावजूद स्वस्थ व्यक्ति के शरीर का तापमान बहुत ही सीमित सीमाओं के अंदर बना रहता है। मामूली परिवर्तनों को छोड़ दें तो एक स्वस्थ व्यक्ति का शारीरिक तापमान औसतन 37 डिग्री सेल्सियस (98.6 डिग्री फैरेनहाइट) रहता है। कुछ अध्ययनों के अनुसार यह स्वस्थ व्यक्तियों में 36.5 डिग्री सेल्सियस से लेकर 37.5 डिग्री सेल्सियस (97.7 से लेकर 99.5 फैरेनहाइट) के बीच बना रहता है। सन् 1868 में जर्मन चिकित्सक एवं मनोचिकित्सक कार्ल हैनहोल्ड अगुस्त वुंडरलिश (Carl Reinhold August Wunderlich] 1815-1877) ने बताया कि मानव शरीर का औसत तापमान 98.6 डिग्री फैरेनहाइट होता है और इस तापमान में कुछ स्थितियों में मामूली बदलाव हो सकता है। बाह्य वातावरण के तापमान में महत्वपूर्ण वृद्धि अथवा कमी के बावजूद स्वस्थ मनुष्य का शारीरिक तापमान कमोबेश स्थिर कैसे बना रहता है ? - इस सवाल का सटीक जवाब उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध तक वैज्ञानिकों के पास नहीं था। उन्नीसवीं सदी के मध्य में कुछ वैज्ञानिको ने विचार प्रकट किया कि मनुष्य के शरीर के तापमान को स्थिर बनाए रखने में उसकी रीढ़ रज्जु (स्पाइनल कॉर्ड) और तंत्रिका तंत्र (नर्वस सिस्टम) महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। स्कॉटिश चिकित्सक जेम्स करी (James Currie, 1756-1805) और जर्मन चिकित्सक कार्ल फॉन लीबामाइस्ता (Carl von Liebermeister]1833-1901) ने इस विचार को स्वीकार किया कि मानव शरीर में ताप नियंत्रण केंद्र होते हैं। सन् 1875 में प्रकाशित अपने शोध पत्र में लीबामाइस्ता ने यह विचार भी व्यक्त किया कि केंद्रीय तंत्रिका तंत्र की ताप संचालन प्रणाली में दोष आने पर शारीरिक तापमान में महत्वपूर्ण वृद्धि या कमी हो सकती है।

तत्पश्चात, सन् 1876 में फ्रांस के शरीरक्रिया वैज्ञानिक क्लोड बेर्नाड (Claude Bernard,1813-1878) ने इस संबंध में कुछ महत्वपूर्ण और नए विचार प्रकट किए। उनके अनुसार "बाह्य वातावरण की तरह हमारे शरीर का अपना एक आंतरिक वातावरण होता है। हमारा तंत्रिका तंत्र इस आंतरिक वातावरण से संबंधित विभिन्न घटकों को सीमित सीमाओं के अंदर समस्थैतिक (होमियोस्टैटिक) बनाए रखने में अहम् भूमिका निभाता है।" उनका कहना था कि वाहिकाओं में संकुचन और विस्तारण पैदा करने वाली तंत्रिकाएं ऊतकों में होने वाली चयापचय की क्रियाओं को जरूरत के अनुसार तेज अथवा मंद कर सकती हैं। उन्होंने यह भी बताया कि उस वक़्त तक ज्ञात तथ्यों के आधार पर यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है कि हमारे शारीरिक तापमान को नियंत्रित करने वाले केंद्र कहां स्थित हैं। ऐसे केंद्र मज्जा (मेड्वला), अग्र मस्तिष्क, रीढ़ रज्जु, या मस्तिष्क वृंत (ब्रेन स्टेम), इनमें किसी एक में स्थित हो सकते हैं। सन् 1889 में यूनिवर्सिटी ऑफ पेन्सिलवेनिया के मेडिकल स्कूल के प्रोफेसर आइजैक ओटीटी (Isaac Ott, 1847-1916) ने मस्तिष्क में तापमान नियंत्रण केंद्र होने की संभावना का समर्थन किया। वे यह तो नहीं बतला सके कि ये केंद्र मस्तिष्क के किस हिस्से में है लेकिन उन्होंने कुछ ऐसे क्षेत्रों के नाम सुझाए जहाँ इनके होने की प्रबल संभावनाएं थी। इनमें अग्र मस्तिष्क, पश्च मस्तिष्क तथा रीढ़ रज्जु का उल्लेख था।

उन्नीसवीं सदी के अंतिम वर्षों में ब्रिटिश शरीरक्रिया वैज्ञानिक मारकस सिमोर पेम्ब्री (Marcus Seymour Pembrey, 1868-1934) और इटली के तांत्रिक विज्ञानी लुइजी लुचानी (Luigi Luciani,1840-1919) ने अपने समकालीन वैज्ञानिकों को यह कहकर भ्रमित कर दिया कि तापमान नियंत्रण केंद्र महज कल्पना की उपज है। उनका विचार था कि

शारीरिक तापमान का नियंत्रण कोई केंद्र नहीं बल्कि प्रतिवर्ती क्रियाएं (रिफ्लेक्स एक्शन) करती हैं। इन प्रतिवर्ती क्रियाओं का संबंध किसी एक केंद्र के बजाय संपूर्ण तंत्रिका तंत्र से होता है। बहरहाल, उनकी यह धारणा निर्मूल साबित हुई। सन् 1885 में फ्रांस के शरीरक्रिया वैज्ञानिक शाल रिशे (Charles Richet, 1850-1935) ने तर्क दिया कि अतिज्वर और असामान्य ताप वृद्धि के मामलों की व्याख्या तभी संभव है जब हम पहले सिद्धांत रूप में यह मान लें कि शारीरिक तापमान का नियंत्रण कुछ केंद्र विशेष करते हैं। कुल मिलाकर, उन्नीसवीं सदी के अंतिम वर्षों में अधिकांश वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुंच गए थे कि शरीर में ताप नियंत्रण केंद्र होता है और संभवतया यह केंद्र मस्तिष्क के रेखीपिंड (कॉर्पस स्ट्राइएटम) में होता है।

बीसवीं शताब्दी में वैज्ञानिकों को यह सुनिश्चित करना था कि मानव मस्तिष्क में ताप नियंत्रण केंद्र कहाँ स्थित है? सन् 1914 में जर्मन वैज्ञानिक आर आइजनशमित (R Isenschmidt) ने संभावना व्यक्त की कि ताप नियंत्रण केंद्र मस्तिष्क के एक हिस्से 'भस्माभ कंद (tuber cinereum)' में हो सकता है। इसके बाद सन् 1921 में यूनिवर्सिटी ऑफ लुएवल (कैनटकी, अमेरिका) के औषध विज्ञानी हेनरी जी बारबर ने सर्वप्रथम यह विचार प्रकट किया कि शरीर के ताप नियंत्रण में चेतक (थैलेमस) का उपक्षेत्र महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सन् 1930 के आसपास हुई एक खोज ने वैज्ञानिकों को इस सवाल को सुलझाने में योगदान दिया। उस खोज के अनुसार 'अनुकंपी तंत्रिका तंत्र का नियंत्रण मस्तिष्क का एक भाग अधश्चेतक (हाइपोथैलेमस) करता है। इस खोज ने वैज्ञानिकों को इस निष्कर्ष पर पहुँचाया कि शारीरिक तापमान को नियंत्रित करने वाले केंद्र भी निश्चित रूप से अधश्चेतक में होने चाहिए। फलस्वरूप, अब वैज्ञानिकों का पूरा ध्यान अधश्चेतक पर केंद्रित हो गया।

आखिर वैज्ञानिकों का यह प्रयास सफल रहा। सन् 1937 में स्टीवन वाल्टर रैंसन (Stephen Walter Ranson, 1880-1942) और उनके सहयोगियों ने सन् 1911 में लंदन स्थित सर विक्टर होरस्ली (Victor Horsley,1857-1916) की प्रयोगशाला में उनके सहायक शरीरक्रिया वैज्ञानिक रॉबर्ट हेनरी क्लार्क (1850-1926) द्वारा मस्तिष्क के अध्ययन के लिए बनाए गए एक उपकरण की मदद से यह सिद्ध कर दिया कि मनुष्य सहित अधिकांश स्तनधारी प्राणियों में मस्तिष्क का हिस्सा अधश्चेतक उनके शारीरिक तापमान का नियंत्रण करता है। बाद के वर्षों में वैज्ञानिकों को मालूम हुआ कि अधश्चेतक में शारीरिक तापमान को समस्थिति में बनाए रखने के लिए दो केंद्र होते हैं। इनमें से एक केंद्र अधश्चेतक के अग्र भाग और दूसरा केंद्र इसके पश्च भाग में होता है। अधश्चेतक में बहने वाले खून के सामान्य तापमान में वृद्धि अथवा कमी, इन केंद्रों को सक्रिय करती है। जब खून के तापमान में वृद्धि होती है तो अधश्चेतक के अग्रभाग में स्थित केंद्र उत्तेजित हो उठता है और तत्काल ही परानुकंपी तंत्रिका तंत्र (पैरासिम्पेथैटिक नर्वस सिस्टम) के माध्यम से शरीर से ऊष्मा विसरण की क्रियाओं को सक्रिय करता है। फलस्वरूप, शरीर से अतिरिक्त ऊष्मा बाह्य वातावरण में विसरित होने लगती है और शरीर का तापमान समस्थिति की सीमाओं में बना रहता है। जब हमारे शरीर के तापमान में कमी होने के संकेत अधश्चेतक के पश्च भाग में स्थित ताप नियंत्रण केंद्र तक पहुंचते हैं तो वह अनुकंपी तंत्रिका तंत्र (सिम्पेथैटिक नर्वस सिस्टम) के माध्यम से ऊष्मा संरक्षण एवं उत्पादन क्रियाओं को सक्रिय करता है। फलस्वरूप, हमारा शारीरिक तापमान समस्थिती की सीमाओं में बना रहता है। इस प्रकार से हमारे मस्तिष्क का हिस्सा अधश्चेतक एक 'तापस्थापी (थर्मोस्टेट)' की तरह कार्य करता है और शरीर के तापमान को समस्थिति में बनाए रखने में सहायता करता है।

बहरहाल, फिलवक्त यहाँ लेख के शीर्षक के अनुसार इस सवाल पर विचार करना

स्टीवन वाल्टर रैंसन

अधश्चेतक में शारीरिक तापमान को समस्थिति में बनाए रखने के लिए दो केंद्र होते हैं। इनमें से एक केंद्र अधश्चेतक के अग्र भाग और दूसरा केंद्र इसके पश्च भाग में होता है। अधश्चेतक में बहने वाले खून के सामान्य तापमान में वृद्धि अथवा कमी, इन केंद्रों का सक्रिय करती है। जब खून के तापमान में वृद्धि होती है तो अधश्चेतक के अग्रख्राग में स्थित केंद्र उत्तेजित हो उठता है और तत्काल ही परानुकंपी तंत्रिका तंत्र (पैरासिम्पेथैटिक नर्वस सिस्टम) के माध्यम से शरीर से ऊष्मा विसरण की क्रियाओं को सक्रिय करता है।

रॉबर्ट हेनरी क्लार्क

स्वेद ग्रंथियों से स्रावित होने वाले पसीने की दर, त्वचा में मौजूद ऊष्मा संवेदक और अधश्चेतक में स्थित केंद्रीय ताप नियंत्रण केंद्र, दोनों तय करते हैं। त्वचा में मौजूद ऊष्मा संवेदी प्रतिवर्ती क्रियाएं पसीने का स्राव शुरू करती हैं और केंद्रीय ताप नियंत्रण केंद्र इस स्राव का जरूरत के अनुसार बढ़ाते-घटाते रहते हैं। गर्मियों के दिनों में थार जैसे रेगिस्तानी भू-भाग में मनुष्य के शरीर से दिन भर में 12 लीटर तक पसीना निकल सकता है। कभी-कभी तो पसीने का स्राव 1600 मिलीलीटर प्रति घंटा तक पहुँच जाता है। पसीने का 99.2 से लेकर 99.7 प्रतिशत भाग भार की दृष्टि से पानी होता है। अपने वाष्पीकरण के लिए पसीना शरीर से ऊष्मा ग्रहण करता है।

उचित होगा कि 'हमें पसीना क्यों और कैसे आता है?' 'उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक और बीसवीं सदी के प्रथम दशक के दौरान वैज्ञानिक यह मालूम कर चुके थे कि पसीने का स्राव शारीरिक त्वचा के तापमान और उसकी वाहिकाओं में खून के बहाव पर निर्भर रहता है। मनुष्य गर्म रक्त वाला प्राणी है। शारीरिक तापमान के 44 डिग्री सेल्सियस या इससे अधिक होने पर शरीर में विकृतियाँ आने लगती हैं। इस तापमान पर शरीर की कोशिकाओं का प्रोटीन तेजी से विधटित होने लगता है। इस विघटन की वजह से कोशिकाएं नष्ट होने लगती हैं। इस अवस्था में तीव्र दर्द महसूस होने लगता है। उल्लेखनीय है कि शरीर में उपापचयन की क्रियाओं से ऊष्मा पैदा होती है। जब बाह्य वातावरण का तापमान शरीर के तापमान से अधिक हो जाता है तो शरीर चालन (कंडक्शन), संवहन(कंवेक्शन) और विकिरण (रेडिएशन) , इन तीन माध्यमों से वातावरण से ऊष्मा ग्रहण करने लगता है। गरम भोजन और पेयों से भी शरीर को ऊष्मा मिलती है। शरीर को वातावरण से ऊष्मा न मिल पाने की अवस्था में भी एक 69 किलोग्राम वजन वाले व्यक्ति के शरीर में होने वाले उपापचयन की न्यूनतम मात्रा से भी प्रति घंटा 70 कैलोरी ऊष्मा पैदा होती है जो शरीर से ऊष्मा हानि न होने की अवस्था में उस व्यक्ति के शरीर के तापमान को औसतन एक डिग्री सेल्सियस प्रति घंटा की दर से बढ़ा सकती है।

ठंडी जलवायु में जब वातावरण का तापमान 28 डिग्री सेल्सियस या इससे कम होता है, शरीर से यह अतिरिक्त ऊष्मा जरूरत मुताबिक वातावरण में विसरित होते रहती है। बाह्य वातावरण के तापमान के 30 डिग्री सेल्सियस होने पर भी शरीर से ऊष्मा हानि होती रहती है। इस तापमान पर शरीर की प्रेरक तंत्रिकाएं त्वचा की परिधि वाहिकाओं का विस्तारण (डाइलेशन) करने लगती हैं। बाह्य वातावरण का तापमान 30 डिग्री सेल्सियस से अधिक होने पर जब हमारा शरीर चालन, संवहन और विकिरण के माध्यम से अपनी अतिरिक्त ऊष्मा को पर्याप्त मात्रा में विसरित नहीं कर पाता है, परिधि वाहिकाओं के विस्तारण के साथ-साथ हमारी स्वेद ग्रंथियां पसीना स्राव करने लगती हैं। परिधि वाहिकाओं के विस्तारण से उनमें खून का प्रवाह अधिक मात्रा में होने लगता है। फलस्वरूप, शरीर के अंदरूनी हिस्सों से त्वचा की सतह पर ऊष्मा अधिक मात्रा में पहुंचने लगती है और स्वेद ग्रंथियों से स्रावित होने वाले पसीने को वाष्पन के लिए त्वचा की सतह से आसानी से ऊष्मा मिलने लगती है।

वैज्ञानिक अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि स्वेद ग्रंथियों से स्रावित होने वाले पसीने की दर, त्वचा में मौजूद ऊष्मा संवेदक और अधश्चेतक में स्थित केंद्रीय ताप नियंत्रण केंद्र, दोनों तय करते हैं। त्वचा में मौजूद ऊष्मा संवेदी प्रतिवर्ती क्रियाएं पसीने का स्राव शुरू करती हैं और केंद्रीय ताप नियंत्रण केंद्र इस स्राव को जरूरत के अनुसार बढ़ाते-घटाते रहते हैं। गर्मियों के दिनों में थार जैसे रेगिस्तानी भू-भाग में मनुष्य के शरीर से दिन भर में 12 लीटर तक पसीना निकल सकता है। कभी-कभी तो पसीने का स्राव 1600 मिलीलीटर प्रति घंटा तक पहुँच जाता है। पसीने का 99.2 से लेकर 99.7 प्रतिशत भाग भार की दृष्टि से पानी होता है। अपने वाष्पीकरण के लिए पसीना शरीर से ऊष्मा ग्रहण करता है। एक मिलीलीटर पसीने का वाष्पन होने पर हमारा शरीर 0.6 किलोकैलोरी ऊष्मा खोता है। शरीर से निकलने वाले पसीने की मात्रा बाह्य वातावरण की सापेक्षिक आर्द्रता पर भी निर्भर करती है। यदि आर्द्रता अधिक है तब वातावरण का तापमान अपेक्षाकृत कम होने पर भी अधिक पसीना आता है। साथ ही पसीने के वाष्पीकरण दर उसी अनुपात में कम हो जाती है। पसीना शरीर को तभी तक गरम होने से बचा सकता है जब तक उसका वाष्पन होता रहता है। यदि पसीना वाष्पित न हो पाए और शरीर से टपकता रहे तो उससे शरीर को अपने तापमान को समस्थिति में बनाए रखने में मदद नहीं मिलती है। वातावरण शुष्क हो तो शरीर से पसीना

तेजी से वाष्पित होता रहता है। वातावरण में आर्द्रता बढ़ने के साथ-साथ पसीने का वाष्पन कम होने लगता है। यही वजह है कि समान वायुमंडलीय तापमान होते हुए भी आर्द्र गरमी शुष्क गरमी से कहीं अधिक कष्टदायक महसूस होती है।

भौतिक कारणों से शारीरिक तापमान में वृद्धि और भावनात्मक तनाव, इन दोनों स्थितियों में तंत्रिकाएं स्वेद ग्रंथियों को पसीना स्रावित करने के लिए उद्दीप्त करती हैं। सामान्यतया भावनात्मक तनाव की वजह से पसीने का स्राव हथेलियों, तलुओं, कांख और माथे पर होता है जबकि भौतिक कारणों से शारीरिक तापमान में वृद्धि होने पर पसीने का स्राव संपूर्ण शरीर पर होता है। स्वेद ग्रंथियों से स्रावित होने वाले पसीने की मात्रा लिंग, आनुवंशिकी, वातावरण के स्वरुप, उम्र और स्वास्थ्य के स्तर से प्रभावित होती है। जिनका शारीरिक भार अधिक होता है, उन्हें शारीरिक तापमान में संभावित वृद्धि की वजह से अधिक पसीना आता है। शारीरिक दृष्टि से चुस्त-दुरुस्त व्यक्तियों को भौतिक कारणों से शारीरिक तापमान में वृद्धि होने पर पसीना जल्दी आता है क्योंकि उनकी शारीरिक ताप नियंत्रण प्रणाली (थर्मोरेगुलेटरी सिस्टम) अधिक प्रभावी होती है।

प्रत्येक स्वेद ग्रन्थि के इर्द-गिर्द रुधिर कोशिकाओं (कैपिलरीज) का घना जाल होता है। इन कोशिकाओं में बहते खून से ही स्वेद ग्रंथियां पसीने के लिए आवश्यक पानी प्राप्त करते हैं। पसीने का निर्माण इनकी स्रावी कोशिकाओं में होता है। रचनात्मक दृष्टि से एक्क्राइन स्वेद ग्रंथि शाखाविहीन, धुमावदार कुंडली होती है। ये ग्रंथियां त्वचा की भीतरी सतह के ऊतकों के समीप स्थित होती है। इनकी स्राव नलिकाएं त्वचा की बाहरी सतह पर खुलती हैं। पसीना निकलने के दौरान इन ग्रंथियों की कोशिकाओं में कोई टूट-फूट नहीं होती है। एपोक्राइन ग्रंथियों की संख्या अपेक्षाकृत कम होती है। इनका स्राव बालों की जड़ों के छिद्रों में से निकलता है। इस स्राव में कोशीय पदार्थ भी होते हैं। फलस्वरूप, यह एक्क्राइन ग्रंथियों के स्राव की तुलना में काफी गाढ़ा होता है और यह गंधयुक्त होता है। मनुष्यों में एपोक्राइन ग्रंथियां भौंह, काँख, पेडू और पुरुषों में उनके सीने पर चूचुकों के आसपास अधिक होती हैं। सामान्यतया पसीना निकलने की दर शारीरिक जल में मामूली कमी होने से प्रभावित नहीं होती है। अधिक पानी पीने से भी पसीने के स्राव में कोई विशेष परिवर्तन नहीं होता है। पसीने में पानी के अलावा सोडियम क्लोराइड, सल्फेट, फॉस्फेट, यूरिया और लैक्टिक अम्ल भी मौजूद रहते हैं। अत्यधिक गरम वातावरण में पसीने के साथ काफी मात्रा में क्लोराइड तथा कुछ दूसरे यौगिक शरीर से बाहर निकलते हैं। ऐसी स्थिति में शरीर में सोडियम आयनों की कमी हो सकती है। यहां यह तथ्य गौरतलब है कि वजह जो भी हो लेकिन शरीर में पानी और सोडियम आयन, दोनों का संतुलन बना रहना चाहिए।

subhash.surendra@gmail.com

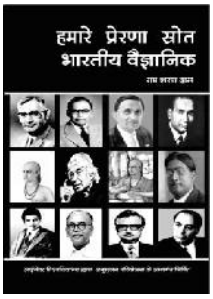

राम शरण दास 2 अप्रैल 1944 को मुजफ्फरनगर मे जन्में। मेरठ विश्वविद्यालय से एम.एस-सी एवं दिल्ली विश्वविद्यालय से बी.एड. और एम.एड. किया। सीबीएसई, एनसीईआरटी, एनआईओएस तथा इग्नू के लिये आपने विज्ञान पुस्तकों का लेखन किया। विज्ञान लेखन के अतिरिक्त आपने अनुवाद के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किये हैं। व्हिट्टेकर पुरस्कार, राजीव गांधी राष्ट्रीय ज्ञान-विज्ञान मौलिक लेखन पुरस्कार आदि से सम्मानित रामशरण दास ने कई विश्व प्रसिद्ध विज्ञान कथाओं तथा उपन्यासों का संक्षिप्तिकरण किया। उक्त पुस्तक का उद्देश्य उभरते युवा मस्तिष्कों को वैज्ञानिकों, विज्ञान-विधियों, वैज्ञानिक आविष्कारों औरउनके समाज पर प्रभावों आदि के विषय में और अधिक अध्ययन करने की प्रेरणा देना है जिससे वे वैज्ञानिक ज्ञान संपन्न समाज के निर्माण के लिए संकल्प लें।

●

एम.एस-सी, डीफिल और पी.एच-डी शिक्षित डॉ. सुनंदा दास का जन्म 13 जून 1959 को इलाहाबाद में हुआ। उन्हें एकेडमिक एक्सीलेंस अवार्ड, शताब्दी सम्मान : विज्ञान परिषद, श्रीमती उमाप्रसाद विज्ञान लेखन सम्मान से सम्मानित डॉ. सुनंदा दास की रचनायें वैज्ञानिक, साइंस रिपोर्टर, विज्ञान और अविष्कार आदि में प्रकाशित होती रही हैं। ग्रीन हाउस गैसें, शोधपत्र, रिव्यू आर्टिकल, बुक चेप्टर आदि कृतियां प्रकाशित हैं। आप अकार्बनिक रसायन विज्ञान, चौधरी महादेव प्रसाद महाविद्यालय में एसोसियेट प्रोफेसर हैं। प्रस्तुत पुस्तक में प्रदूषण से जन्म लेने वाले रोगों का विश्लेषण है। पूर्णतः प्रदूषण युक्त विश्व संभव नहीं है, पर यह प्रयास तो किया जा सकता है कि हम भौगोलिक सीमाओं की परवाह किए बगैर उसे न्यूनतम करें। प्रदूषण और प्रदूषणजनित रोग एक ज्वलंत समस्या ही नहीं बल्कि एक तरह का नासूर है जो साल दर साल हमारे द्वारा की गई गलतियों का परिणाम है। पुस्तक हमें अपनी प्राकृतिक संसाधनों का इस्तेमाल सोच समझकर करने और प्रदूषण रोकने या कम करने की दिशा में सकारात्मक प्रयास करने के लिए जागरूक करती है।

इनसाइट एक रोबोटिक लैन्डर है जिसका डिजाइन मंगल ग्रह की आन्तरिक संरचना का पता करने के लिए किया गया है। इस अन्तरिक्ष यान का डिजाइन 2008 के फीनिक्स मार्स लैन्डर से मिलता जुलता है। चूँकि इनसाइट अन्तरिक्ष यान को पावर सौर पैनेल से दी जाती है इसलिए यह मंगल ग्रह की भूमध्य रेखा के पास लैन्ड करेगा जिससे यह निर्धारित दो वर्ष की अवधि पूरा करेगा।

कालीशंकर

इसरो के वरिष्ठ वैज्ञानिक विगत लगभग चालीस वर्षों से अंतरिक्ष विज्ञान और अंतरिक्ष अन्वेषण पर लेखन करते रहे हैं। तीन सौ से अधिक लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में छपे तथा 25 पुस्तकें प्रकाशित हुईं हैं। आपको कई राष्ट्रीय सम्मानों से सम्मानित किया गया है। कालीशंकर लखनऊ में निवास करते हैं।

अमरीकी अन्तरिक्ष संस्था नासा ने 5 मई 2018 को मंगल ग्रह का अन्तरिक्ष अध्ययन करने के लिए एवं उस पर आने वाले भूकम्प की रिकार्डिंग के लिए तैयार किये गये प्रथम अत्यन्त प्रतीक्षित मिशन का प्रमोचन किया है। इस मिशन को इनसाइट (इन्टीरियर एक्सप्लोरेशन यूजिंग सेस्मिक इनवेस्टीगेशन ज्योडेसी एंड हीट ट्रान्सपोर्ट) नाम दिया गया है। यह अन्तरिक्ष यान कैलीफोनिया के वान्डेनबर्ग वायुसेना अड्डे से पैसिफिक समयानुसार सुबह 04:05 बजे एटलस वी राकेट से लाँच किया गया। नासा के सुरक्षा अधिकारियों ने बताया कि लाँच किये जाने से पहले धुंध ही एक मात्र चिन्ता की बात थी जिसके खत्म होने के बाद लाँचिंग प्रक्रिया शुरू की गई। नासा के एक सुरक्षा अधिकारी ने ट्वीट कर कहा, ''इस मिशन के अन्तर्गत मंगल की सतह के नीचे क्रस्ट, मैंटल और कोर का पता लगाने के लिए उत्साहित हूँ।''

इनसाइट मंगल के गहरे अन्तरिक्ष संरचना का अध्ययन करेगी ताकि यह पता लगाया जा सके कि पृथ्वी और इसके उपग्रह समेत सभी चट्टानी खगोलीय पिन्डो के निर्माण के बारे में पूर्ण जानकारी दे सके। इसके साथ ही यह भी जाँच करना सम्भव होगा कि ग्रह के आन्तरिक भाग से कितनी गर्मी प्रवाहित हो रही है। इस उपग्रह के मार्स लैन्डर में भूकम्पो का पता लगाने के लिए एक सेस्मोमीटर लगाया गया है। इस मिशन के द्वारा अरबों वर्ष पहले धरती की तरह मंगल ग्रह के पथरीले ग्रह बनने के कारणों का भी पता चल सकेगा। यह मिशन नासा के डिस्कवरी कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रमोचित किया गया है। यह प्रथम ग्रहीय मिशन है जो सतही स्थापित उपकरणों के द्वारा भू-भौतिकी आंकड़े प्राप्त करने के लिए समर्पित है तथा पृथ्वी के अलावा किसी अन्य ग्रह के अन्तरिक ढाँचे और गतिकी (डायनामिक) के अन्वेषण के लिए भी समर्पित है।

इनसाइट अन्तरिक्षयान

इनसाइट एक रोबोटिक लैन्डर है जिसका डिजाइन मंगल ग्रह की आन्तरिक संरचना का पता करने के लिए किया गया है। इस अन्तरिक्ष यान का डिजाइन 2008 के फीनिक्स मार्स लैन्डर से मिलता जुलता है। चूँकि इनसाइट अन्तरिक्ष यान को पावर सौर पैनेल से दी जाती है इसलिए यह मंगल ग्रह की भूमध्य रेखा के पास लैन्ड करेगा जिससे यह निर्धारित दो वर्ष की अवधि पूरा करेगा। लैन्डर का भार 360 कि.ग्रा. तथा इसके एरोशेल का भार 189 कि. ग्रा. है। लैन्डर सौर पैनेल की प्रस्तरित अवस्था में 6.1 मीटर चौड़ा होगा। इसकी विज्ञान डेक 2 मीटर गहरी तथा 1.4 मीटर ऊँची है। इसकी रोबोटिक भुजा की लम्बाई 2.4 मीटर है। पावर जनन के लिए इसमें दो सौर पैनल लगे हैं। लैन्डिग के बाद ये पैनल एक पंखे की तरह खुल गये।

इन साइट अन्तरिक्ष यान में निम्न नीत भार लगे है-

इनसाइट मिशन का लैन्डर

● आन्तरिक ढाँचे का पता लगाने के लिए भूकम्पीय परीक्षण उपकरण (एस.ई.आई.एस): यह उपकरण भूकम्प और अन्य आन्तरिक गतिविधियों का परिशुद्धता से मापन करेगा जिससे मंगल ग्रह के इतिहास और ढाँचे को समझा जा सके। यह इस बात की भी जाँच करेगा कि किस प्रकार मंगल ग्रह की क्रस्ट (ग्रह का बाह्य कवच) और मैन्टल (ग्रह का आन्तरिक कवच) उल्का पात के आघातों को झेलते हैं तथा इस जानकारी से ग्रह के आन्तरिक ढाँचे की जानकारी मिलती है।

● ताप प्रवाह और भौतिक गुण पैकेज (एच पी^{3}): यह उपकरण जर्मन एरोस्पेस केन्द्र के द्वारा प्रदान किया गया है तथा यह एक स्वयं-भेदक ताप प्रवाह प्रोब है। इसका डिजाइन इस प्रकार किया गया है जिससे यह मंगल ग्रह की सतह को पाँच मीटर की गहराई तक खोदकर यह पता कर सके कि मंगल ग्रह की कोर से कितना ताप निकल रहा है तथा यह सूचना ग्रह के तापीय इतिहास की ओर इशारा करती है।

● घूर्णन एवं आन्तरिक ढाँचा परीक्षण (राइज): यह उपकरण जेट प्रापल्सन प्रयोगशाला द्वारा प्रदान किया गया है तथा यह लैन्डर के एक्स बैन्ड रेडियो का प्रयोग करके ग्रहीय घूर्णन के परिशुद्ध मापन करेगा। इससे मंगल ग्रह के आन्तरिक ढाँचे को बेहतर तरीके से समझा जा सकेगा।

● इनसाइट के तापक्रम और हवाएँ (ट्विन्स) उपकरण: यह उपकरण स्पेन के राष्ट्रीय अनुसंधान संस्था द्वारा प्रदान किया गया है तथा यह लैन्डिंग स्थल के मौसम का मापन करेगा।

● इनसाइट का लेजर रेट्रोरेफ्लेक्टर (लारी): यह एक कार्नर क्यूब रेट्रोरेफ्लेक्टर है जिसे इटली की अन्तरिक्ष संस्था ने बनाया है जिसे इनसाइट अन्तरिक्ष यान के शीर्ष डेक पर स्थापित किया गया है। यह निष्क्रिय लेजर रेंज पता करने का काम करेगा (लैन्डर के रिटायर हो जाने के बाद भी) तथा यह मंगल ग्रह के प्रस्तावित भू भौतिकी नेटवर्क का हिस्सा बनेगा।

● उपकरण प्रस्तरण भुजा (आई डी ए): यह 2.4 मी. लम्बी रोबोटिक भुजा है जिसके द्वारा 'एस.ई.आई.एस' और 'एच पी^{3}' उपकरण मंगल ग्रह की सतह पर प्रस्तरित किये जायेंगे।

● उपकरण प्रस्तरण कैमरा (आई डी सी): यह एक कलर कैमरा है जो मंगल ग्रह अन्वेशण बग्घी और मंगल ग्रह विज्ञान प्रयोगशाला नैवकाम से लिया गया है। इसे उपकरण प्रस्तरण भुजा में लगाया गया है तथा यह लैन्डर की डेक में लगे उपकरणों का प्रतिबिम्बन करेगा तथा लैन्डिग साइट के इर्दगिर्द का त्रिविम (स्टीरियोस्कोपिक) दृश्य प्रदान करेगा।

● उपकरण सन्दर्भ कैमरा (आई सी सी): यह एक कलर कैमरा है जो मंगल ग्रह बग्घी/मंगल ग्रह प्रयोगशाला के हैज़काम डिजाइन पर आधारित है। इसे लैन्डर की डेक पर लगाया गया है।

अटलस वी-401 प्रमोचन राकेट

एटलस-वी 401 प्रमोचन राकेट एटलस वी 400/500 परिवार का एक हिस्सा है जिसे यूनाइटेड लाँच एलायंस द्वारा संचालित किया जा रहा है। एटलस वी राकेट वर्ष 2002 से उड़ाये जा रहे हैं तथा इनकी सफलता की दर काफी अच्छी है (केवल एक उड़ान को आंशिक असफलता मिली थी)। इस प्रमोचन वेहिकल का प्रचालन प्रमोचन काम्प्लेक्स 41 से केप केनेवेरल वायु सेना स्टेशन फ्लोरिडा तथा प्रमोचन काम्प्लेक्स 3ई से कैलीफोर्निया के वैन्डेनबर्ग वायु सेना बेस से किया जाता है। वेहिकल की असेम्बली टेक्सास के अलाबामा, सान डीगो तथा यूनाइटेड लाँच एलायंस के मुख्यालय डेनवर (कोलोरैडो) में किया जाता है। अटलस-401 राकेट अटलस परिवार का सबसे छोटा राकेट है। अटलस-401 राकेट है जिसमें ठोस राकेट बूस्टर का प्रयोग नहीं होता है तथा 4.2 मीटर लम्बी

इनसाइट मिशन के तकनीकी आंकड़े

1.	नाम	:	इन्टीरियर एक्सप्लोरेशन यूजिंग सेस्मिक इनवेस्टीगेशन्स, ज्योडेसी एण्ड हीट ट्रान्सपोर्ट
2.	मिशन प्रकार	:	मंगल ग्रह लैन्डर
3.	प्रचालक	:	नासा/जे पी एल
4.	मिशन अवधि	:	2 वर्ष (नियोजित)
5.	अन्तरिक्ष यान के गुण		
	क) निर्माता	:	लाकहीक मार्टिन स्पेस सिस्टम्स
	ख) प्रमोचन भार	:	721 कि.ग्रा.
	ग) लैन्डिग भार	:	358 कि.ग्रा.
	घ) आकार	:	6.1x2.0x1.4 मीटर
	च) पावर	:	600 वाट सौर/लीथियम आयन बैटरी
6.	प्रमोचन तिथि	:	5 मई, 2018, सार्वत्रिक समय 11.04 बजे
7.	प्रमोचन राकेट	:	अटलस वी-401
8.	प्रमोचन स्थल	:	वैन्डेनबर्ग स्पेस लाँच काम्पेक्स-3
9.	ठेकेदार	:	यूनाइटेड लाँच एलांयस
10.	मंगल ग्रह लैन्डिग तिथि	:	26 नवम्बर, 2018
11.	लैन्डिग स्थल	:	एल्सियम प्लैनीटिया

नीतभार फेयरिंग होती है। 401 स्वरूप में दो स्टेजें होती है- एक सामान्य कोर बूस्टर और एक सेन्टौर अपर स्टेज। सेन्टौर बहु प्रज्वलनों के द्वारा नीतभारों को विभिन्न अंतरिक्ष कक्षाओं- निम्न भू-कक्षा, भू-स्थिर ट्रान्सफर कक्षा तथा भू-स्थिर कक्षा में पहुँचा सकते है। प्रत्येक अटलस-वी स्वरूप का तीन संख्या का पहचान विवरण होता है। अटलस-वी 401 के विभिन्न तकनीकी गणक सारणी-2 में दिये गये हैं।

मिशन का बैकशेल और सर्फेस लैन्डर आपस में जोड़ते हुए।

मार्स इनसाइड लैन्डर के 10 आश्चर्यजनक तथ्य

- मंगल ग्रह के लिए यह प्रथम लैन्डर नहीं है लेकिन यह प्रथम लैन्डर है जो मंगल ग्रह की सतह को काफी गहराई में खोदकर अनेक वैज्ञानिक उत्तरों का पता लगायेगा। इस प्रकार मंगल ग्रह के अन्दर झांकने वाला यह प्रथम मिशन होगा। यह मिशन हमें अन्य ग्रहों की भी जानकारी देगा। जब चट्टानी ग्रहों की बात आती है तो हम समझते हैं कि हमने केवल एक ग्रह का ही (पृथ्वी) विस्तृत अध्ययन किया है। इस मिशन से हमें अन्य पृथ्वी भाँति बाह्य ग्रहों की जानकारी भी प्राप्त होगी। इस प्रकार इनसाइट मार्स मिशन से भी बहुत कुछ ज्यादा है।
- इस मिशन से मंगल ग्रह की सतह के भूकम्पों का पता चलेगा। अन्य मिशनों ने यह करने का प्रयास किया लेकिन वे असफल रहे। नासा ने वाइकिंग-1 और वाइकिंग-2 मिशन 1976 में भेजे जिनमें दो भूकम्पमापी उपकरण अन्तरिक्ष यान के सबसे ऊपरी भाग में लगे थे इसलिए इन अभियानों के आंकड़े ज्यादा विश्वसनीय नहीं थे।

सारणी-2

अटलस-वी 401 के तकनीकी गणक

1. प्रकार	:	अटलस-वी 401
2. ऊँचाई	:	58.3 मीटर
3. व्यास	:	3.81 मीटर
4. प्रमोचन भार	:	334, 500 कि.ग्रा.
5. स्टेज 1	:	अटलस कामन कोर स्टेज
6. बूस्टर	:	नही
7. स्टेज 2	:	सेन्टौर
8. निम्न भू कक्षा में नीतभार क्षमता	:	10,470 कि.ग्रा.
9. भू स्थिर ट्रान्सफर कक्षा में नीतभार क्षमत	:	4,750 कि.ग्रा.

- नासा के एन्टेना इनसाइट मिशन का अनुवर्त पृथ्वी से करेंगे। इनसाइट अपनी लोकेशन के नियमित आंकड़ों का प्रेषण नासा के डीप स्पेस नेटवर्क के लिए करेगा। डीप स्पेस नेटवर्क के एन्टेना सौर तंत्र के सभी अन्तरिक्षयानों के सम्पर्क में होते हैं। इस प्रकार इनसाइट की लोकेशन का अनुवर्तन कुछ इंचो या सेन्टीमीटर की परिशुद्धता से किया जा सकेगा। इससे मंगल ग्रह की कोर का अनुमान लगाया जायेगा कि यह द्रव है या ठोस।
- इनसाइट मिशन से यह भी पता चलेगा कि मंगल ग्रह और पृथ्वी में क्या सम्बन्ध है। यद्यपि वैज्ञानिक जाँचें यह बताती हैं कि पृथ्वी, इसके चन्द्रमा और मंगल ग्रह का निर्माण एक ही प्रकार के दृव्यों से हुआ लेकिन विस्तृत अध्ययन ही बताएगा कि यह संकल्पना क्या सही है। इनसाइट का हीट प्रोब परीक्षण इस बात का खुलासा करेगा।
- यह प्रथम अन्तराग्रहीय मिशन है जिसका प्रमोचन वेस्ट कोस्ट से किया गया है। नासा ने मंगल ग्रह के लिए अनेक मिशन भेजे हैं लेकिन सभी फ्लोरिडा से भेजे गये हैं। इनसाइट मिशन का प्रमोचन वैन्डेनबर्ग वायुसेना बेस कैलीफोर्निया से किया गया है। यह शक्तिशाली राकेट अटलस-वी 401 राकेट के कारण सम्भव हो पाया है।
- इनसाइट मिशन के साथ दो अन्य साथी- मार्स क्यूब वन या मार्को भेजे गये हैं जो इनसाइट मिशन के डाटा पृथ्वी को उस समय भेजेंगे जब यह मंगल ग्रह पर लैन्ड करेगा।
- यह मिशन मंगल ग्रह की ज्वालामुखी प्रवृत्तियों का भी खुलासा करेगा जिनमें 25 कि.मी. ऊँचे ओलम्पस मान्स का विशेष स्थान होगा। इनसाइट में एक स्वतः हैमरिंग हीट प्रोब लगी है जो पहली बार ग्रह के आन्तरिक भाग से ताप प्रवाह का मापन करेगा।
- यह मिशन मंगल ग्रह को समय मशीन के रूप में प्रयोग करेगा। पृथ्वी और शुक्र दो पार्थिवेतर ग्रह हैं जिनमें टेक्टोनिक्स गतिविधियाँ हैं जिन्होने इन ग्रहों को काफी क्षति पहुँचाई है। चूँकि मंगल ग्रह पृथ्वी और भाुक्र ग्रहों का मात्र एक तिहाई है (आकार में), इसलिए इसमें ग्रह के ढाँचे को परिवर्तित करने की कम ऊर्जा है।
- इस मिशन से प्राप्त मंगल ग्रह के आंकड़े सदा के लिए उपयोगी होंगे। इनसाइट मिशन का डिजाइन इस प्रकार किया गया है जिससे यह कम से कम एक मंगल वर्ष (दो पृथ्वी वर्ष) तक काम करे और कम से कम मौसमों के एक चक्र के इस ग्रह के आन्तरिक आंकड़े प्रदान करे।

मार्को क्यूबसैट

इनकी संख्या दो है तथा यह एक नासा तकनीकी परीक्षण भी है। ये ब्रीफकेश आकार के क्यूबसैट अपने आप इनसाइट के पीछे फ्लाई करेंगे। इन दो क्यूबसैट का मुख्य लक्ष्य सूक्ष्मीकृत डीप स्पेस संचार उपकरण की जाँच करना है। यह सूक्ष्मीकृत क्यूबसैट तकनीकी का किसी अन्य ग्रह पर प्रथम टेस्टिंग होगी तथा इस जाँच से अनुसंधान कर्ताओं को आशा है कि यह भावी मिशनों के लिए नई क्षमताएँ उपलब्ध करायेगी।

इनसाइट मिशन लैन्डर में नामों की चिप लगाते हुए

इनसाइट की नियोजित लैन्डिग साइट

एक ओर जहाँ इनसाइट मिशन के वैज्ञानिक लक्ष्य मंगल ग्रह की सतह के किसी विशिष्ट फीचर से सम्बन्ध नहीं रखते हैं वहीं दूसरी और अधिकांश लैन्डिग साइटों का चयन प्रायोगिकता के आधार पर किया गया है। यह जरूर ध्यान में रखा गया है कि ये लैन्डिग स्थल ग्रह की भूमध्य रेखा के समीप हों जिससे सौर पैनेलों को पर्याप्त सूर्य का प्रकाश मिल सके तथा स्थल साफ्ट हो जिससे ताप प्रवाह प्रोब आसानी से ग्राउन्ड में प्रवेश कर सकें। इन आवश्यकताओं की पूर्ति जो स्थल सबसे ज्यादा करते है वह 'एल्सियम प्लैनीटिया' में स्थित हैं। इस प्रकार सभी चयनित 22 स्थल इसी क्षेत्र में हैं। अन्य दो क्षेत्र हैं इसिडिस प्लैनीटिया और वैलेस मैरीनेरिस लेकिन ये काफी चट्टानी क्षेत्र हैं जहाँ लैन्डिग सुरक्षित नहीं हो सकती है।

सितम्बर 2013 में प्रारंभिक लैन्डिग स्थलों को कम करके 4 कर दिया गया था तथा उस समय मंगल ग्रह खोजी आरबिटर (एम.आर.ओ) का काफी प्रयोग इन चार लैन्डिग स्थलों की जानकारी लेने के लिए किया गया था। मार्च 2017 में जेट प्रापल्सन प्रयोगशाला के वैज्ञानिकों ने घोषणा की कि इनसाइट मिशन की लैन्डिग साइट का चयन हो चुका है। यह पश्चिमी एल्सियम प्लैनीटिया में 4.5 डिग्री उत्तर और 135.9 डिग्री पूर्व में स्थित है। यह लैन्डिग साइट गेल क्रेटर से 600 कि.मी. दूर है जहाँ से नासा का क्यूरियासिटी रोवर आपरेटर कर रहा है।

इनसाइट मिशन की टीम और भागीदारी

इनसाइट मिशन की विज्ञान और इंजीनियरिंग टीम में अनेक क्षेत्रों, देशों और संस्थाओं के वैज्ञानिक और इंजीनियर शामिल है। विज्ञान टीम में अमरीका, फ्रान्स, जर्मनी, आस्ट्रिया, बेल्जियम, कनाडा, जापान, स्विटजरलैण्ड, स्पेन और ब्रिटेन की विभिन्न संस्थाओं के वैज्ञानिक शामिल हैं। मंगल ग्रह अन्वेषण रोवर परियोजना के वैज्ञानिक डब्ल्यू ब्रूस बैनेरडट इनसाइट मिशन के प्रमुख जाँचकर्ता हैं तथा 'एस ई आई एस' उपकरण के भी नेतृत्व प्रदायक वैज्ञानिक है। सुजाने स्मरियकर, जिनके अनुसंधान ग्रहों के तापीय उत्पत्ति मुद्दे पर केन्द्रित रहते हैं तथा जिन्होंने उन उपकरणों की विस्तृत जाँच विकास पर कार्य किया है जिनका डिजाइन अन्य ग्रहों के तापीय गुणों और ताप प्रवाह के लिए किया था, वे इनसाइट मिशन के 'एच.पी.[3]' उपकरण के प्रमुख नेतृत्व प्रदायक हैं। रेडियो तरंगों के प्रयोग से उच्च अध्ययन के विख्यात विशेषज्ञ सामी आस्मर इनसाइट मिशन के 'राइज़' उपकरण के जाँच कर्ता हैं। इनसाइट मिशन टीम में प्रोजेक्ट मैनेजर टाम हाफमैन और डिपुटी प्रेजिक्ट मैनेजर हेनरी स्टोन भी शामिल हैं। इस परियोजना में योगदान देने वाले प्रमुख संस्थाएँ और संस्थान हैं:-

राष्ट्रीय संस्थान

● अमरीकी अन्तरिक्ष संस्था 'नासा', ● फ्रान्स की अन्तरिक्ष संस्था 'सी.एन.ई.एस.', ● जर्मन एरोस्पेस सेन्टर 'डी.एल. आर.'

योगदान देने वाले संस्थान

● जेट प्रापल्सन प्रयोगशाला, ● लाकहीड मार्टिन, ● फ्रान्स सरकार का एक उपक्रम, ● स्विस सरकार का तकनीकी संस्थान
● मैक्स प्लैंक संस्थान (सौर तंत्र अनुसंधान के लिए),
● इम्पीरियल कालेज लन्दन, ● टोल्यूस, फ्रान्स का रिसर्च संस्थान
● आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय, ● पोलैन्ड की विज्ञान अकादमी

नामों की चिप

सार्वजनिक जनता के लिए नासा ने एक कार्यक्रम प्रारंभ किया जिसके अन्तर्गत कोई भी व्यक्ति अपना नाम इनसाइट मिशन के द्वारा मंगल ग्रह पर भेज सकता है। मिशन के प्रमोचन विलम्बन के कारण नाम भेजने की प्रक्रिया दो बार सम्पन्न की गई जिसमें 24 लाख नाम आये जिनमें 826,923 नाम वर्ष 2015 में रजिस्टर किये गये तथा 16 लाख और नाम वर्ष 2017 में जोड़े गये। नामों के प्रत्येक अक्षर को खोदने के लिए एक इलेक्ट्रॉन बीम का प्रयोग किया गया तथा प्रत्येक अक्षर मानव केश के 1/100 चौड़ाई तक 8 मि.मी. सिलिकन वैफर पर खोदा गया। पहली चिप लैन्डर में नवम्बर 2015 में तथा दूसरी चिप 23 जनवरी 2018 को लगाई गई।

ksshukla@hotmail.com

प्रदूषण का कैंसर

विजन कुमार पाण्डेय

विजन कुमार पाण्डेय लोकप्रिय विज्ञान लेखक हैं और शिक्षा के क्षेत्र से जुड़े हैं। उन्होंने विगत तीन दशकों में तीन सौ से अधिक लेख लिखे हैं। 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में वे नियमित रूप से प्रकाशित होते रहे हैं। देश के प्रतिष्ठित विज्ञान पत्रिकाओं में आपकी रचनाओं की कई-कई पाठक हैं जो आपके काम को रेखांकित करते रहते हैं।

आज हम अपने शहरों को गैस की भट्टी बना दिया है। बड़े और औद्योगिक शहरों को छोड़ ही दीजिए, छोटे और कम आबादी वाले शहरों की भी आबो हवा तेजी से बिगड रही है। अब तो सांस लेना भी दूभर हो रहा है। तभी तो विश्व स्वास्थ्य संगठन का हालिया जारी ग्लोबल एयर पॉल्यूशन डाटा बेस बताता है कि 15 सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में से 14 भारत से है। आज भारत दुनिया के अग्रणी देशों में एक है। ऐसा अकूत प्राकृतिक संपदा के दोहन और औद्योगिक विकास से संभव हो सका है। लेकिन इसके बदले हमें प्रदूषण मिला है, जिसने हवा, जल और पृथ्वी को प्रदूषित कर दिया है। वायु प्रदूषण की भयावह सच्चाई यह है कि देश के ज्यादातर शहर इसकी चपेट में आ गए हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन की ओर से जेनेवा में दुनिया के बीस सबसे अधिक प्रदूषित शहरों की सूची जारी हुई, जिसमें चौदह शहर भारत के हैं। हालांकि ये आंकड़े 2016 के हैं, जो जारी अब हुए हैं। इनमें कानपुर सबसे ऊपर है, जबकि दिल्ली का स्थान छठा है। दिल्ली समेत सूची में दर्ज शहर कई सर्वेक्षणों में पहले भी प्रदूषित बताए जाते रहे हैं। दिल्ली को लेकर तो उच्चतम न्यायालय कई मर्तबा केंद्र और दिल्ली सरकार को फटकार भी लगा चुका है। औद्योगिक विकास, बढ़ता शहरीकरण और उपभोगत्तावादी संस्कृति, आधुनिक विकास के ऐसे नमूने हैं, जो हवा, पानी और मिट्टी को एक साथ प्रदूषित कर रहे हैं। जिससे पूरे जीव-जगत को ही खतरा पैदा हो गया है। आज आदमी ही नहीं पशु-पक्षी पेड़ पालव सभी प्रदूषित वायु की गिरफ्त में है।

डब्लूएचओ के आंकड़े से पता चलता है कि 2010 से 2014 के बीच दिल्ली के प्रदूषण स्तर में मामूली सुधार हुआ है, पर 2015 से फिर स्थिति बिगाड़ने लगी है। दिल्ली में पीएम-2.5 का वार्षिक औसत 143 माइक्रोग्राम प्रति क्यूबिक मीटर है, जो राष्ट्रीय सुरक्षा मापदंड से तीन गुना ज्यादा है। भारत में औद्योगीकरण की रफ्तार भूमंडलीकरण के बाद तेज हुई। एक तरफ प्राकृतिक संपदा का दोहन बढ़ा है, तो दूसरी तरफ औद्योगिक कचरे में बेतहाशा बढ़ोतरी हुई। इस प्रदूषित हवा का खुलासा सल्फेट, नाइट्रेट, कॉर्बन के सूक्ष्म कणों के वायु में विलय की सालाना मात्रा के औसत के आधार पर किया गया है। इस रिपोर्ट के आधार पर जहां कल-कारखाने वाला शहर फरीदाबाद प्रदूषित हुआ है, वहीं वाराणसी और गया जैसे धार्मिक नगरों की हवा भी इसकी चपेट में आ गई है। दिल्ली में तो बढ़ते वाहन वायु को दूषित करते हैं, लेकिन गया और वाराणसी जैसे छोटे शहरों की वायु क्यों खराब हुई, इसके कारण स्पष्ट नहीं हैं। सड़क से उड़ती धूल इस परत को और गहरा बना देती है।

बीएस तकनीक का पालन

दरअसल प्रदूषण की मात्रा वाहन निर्माण की तकनीक और हालत पर निर्भर करती है। इस लिहाज से कारों से फैलने वाले प्रदूषण नियंत्रण के उपाय ज्यादा व्यावहारिक होने जरूरी हैं। वाहनों से होने वाले वायु प्रदूषण को कम करने के मकसद से भारत ने स्टेज एमिशन स्टैंडर्ड यानी बीएस तकनीक से जुड़े मानक तय किए और इन्हें चरणबद्ध तरीके से लागू करने के लिए भारत सरकार ने 2002 में वाहन ईंधन नीति घोषित की। बीएस-3 तकनीक से निर्मित वाहन वर्ष 2005 में शुरू हुए। इन्हें 31 मार्च 2017 तक बेचने की अनुमति थी। पर ये अब भी बेचे जा रहे हैं। जबकि बीएस-4 तकनीक के वाहन ही बेचे जाने थे। संयुक्त राष्ट्र के उत्सर्जन नियमों के साथ चलने के लिए सरकार का इरादा बीएस-5 को नजरअंदाज कर सीधे बीएस-6 को 2020 में लागू करने की मंशा है। लेकिन कंपनियां जिस तरह सरकारी आदेशों की अवहेलना करने में लगी हैं, उससे लगता है कि शायद ही 2020 में बीएस-6 वाहन तकनीक लागू हो पाए। परिवहन, निर्माण कार्य और औद्योगिक उत्पाद ईंधन के परंपरागत साधनों के उपयोग जैसी तमाम गतिविधियों के चलते भारत में वायु प्रदूषण बढ़ रहा है। रिपोर्ट के मुताबिक फिलहाल दुनिया में दस में से नौ लोग प्रदूषित वायु में सांस लेने को विवश हैं। यही वजह है कि हर साल सत्तर लाख लोग केवल प्रदूषण से पैदा होने वाले रोगों से काल के गाल में समा जाते हैं। वाहन प्रदूषण की वजह से लोगों में गला, फेफड़े और आंखों की तकलीफ बढ़ रही है। कई लोग मानसिक अवसाद की गिरफ्त में भी आ रहे हैं। हालांकि हवा में घुलता जहर छोटे नगरों में भी प्रदूषण का सबब बन रहा है। कार-बाजार ने इसे और भयावह बना दिया है। यही कारण है कि इस सूची में दिल्ली, फरीदाबाद, कानपुर, गया और वाराणसी के अलावा पटना, लखनऊ, आगरा, मुजफ्फरपुर, श्रीनगर, गुरुग्राम, जयपुर, पटियाला और जोधपुर जैसे शहरों में भी प्रदूषण खतरनाक स्तर को लांध गया है। उद्योगों से धुंआ उगलने और खेतों में बड़े पैमाने पर औद्योगिक और इलेक्ट्रॉनिक कचरा जलाने से भी इन शहरों की हवा में जहरीले तत्त्वों की सधनता बढ़ी है। बढ़ते वाहनों के चलते वायु प्रदूषण की समस्या पूरे देश में भयावह होती जा रही है। मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ के लगभग सभी छोटे शहर प्रदूषण की चपेट में हैं। डीजल और घासलेट से चलने वाले वाहनों और सिंचाई पंपों ने इस समस्या को और विकराल रूप दे दिया है। केंद्रीय प्रदूषण बोर्ड देश के एक सौ इक्कीस शहरों में वायु प्रदूषण का आकलन किया है। इसकी एक रिपोर्ट के मुताबिक देवास, कोझिकोड और तिरुपति को अपवाद स्वरूप छोड़ कर बाकी सभी शहरों में प्रदूषण एक बड़ी समस्या है। इस प्रदूषण की मुख्य वजह तथाकथित वाहन क्रांति है। विश्व स्वास्थ्य संगठन का दावा है कि डीजल और कैरोसिन से पैदा होने वाले प्रदूषण से ही दिल्ली में एक तिहाई बच्चे सांस की बीमारी की गिरफ्त में हैं। बीस फीसद बच्चे मधुमेह जैसी लाइलाज बीमारी की चपेट में हैं। इस खतरनाक हालात से रुबरू होने के बावजूद दिल्ली और अन्य राज्य सरकारें ऐसी नीतियां अपना रही हैं, जिससे प्रदूषण को नियंत्रित किए बिना औद्योगिक विकास को प्रोत्साहन मिलता रहे। यही वजह रही कि 2016 में भारत में बाहरी वायु प्रदूषण के चलते बयालीस लाख और घरेलू प्रदूषण के चलते अड़तीस लाख मौतें हुई हैं। एक साल में हुई ये अस्सी लाख मौतें वायु प्रदूषण की डरावनी तस्वीर पेश करती हैं।

उज्जवला योजना की शुरुआत

घरेलू वायु प्रदूषण को नियंत्रित करने में सरकार की उज्जवला योजना ने बेहतर काम किया है। एक मई को श्रमिक दिवस के अवसर पर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने उत्तर प्रदेश के बलिया जिले में प्रधानमंत्री उज्जवला योजना की शुरुआत की थी। इस योजना का उद्देश्य अगले तीन वर्षो में गरीबी रेखा से नीचे क पाँच करोड़ लाभार्थियों को रसोई गैस के

फिलहाल दुनिया में दस में से नौ लोग दूषित वायु में सांस लेने को विवश हैं। यही वजह है कि हर साल सत्तर लाख लोग केवल प्रदूषण से पैदा होने वाले रोगों से काल के गाल में समा जाते हैं। वाहन प्रदूषण की वजह से लोगों में गला, फेफड़े और आँखों की तकलीफ बढ़ रही है। कई लोग मानसिक अवसाद की गिरफ्त में भी आ रहे हैं। हालांकि हवा में घुलता जहर छोटे नगरों में भी प्रदूषण का सबब बन रहा है। कार-बाजार ने इसे और भयावह बना दिया है।

कनेक्शन प्रदान करना है। इस योजना के तहत बीते दो साल में लगभग पौने चार करोड़ गरीब परिवारों को स्वच्छ ईंधन की सुविधा निशुल्क उपलब्ध कराई गई है। इस कारण इन परिवारों ने जैविक ईंधन से छुटकारा पा लिया है। लेकिन इतने भर से वायु प्रदूषण पर नियंत्रण नामुनकिन है। इसके लिए व्यापक पैमाने पर बिगड़ती पर्यावरण की स्थिति को सुधारने की जरूरत है। पहली बार यह तथ्य सामने आया है कि बढ़ता प्रदूषण पेड़-पौधों में कार्बन सोखने की क्षमता धटा रहा है। बढ़ते शहरीकरण और औद्योगिकीकरण के लिए जिस तरह पेड़ों को काटा जा रहा है, उससे पेड़ों की प्रकृति में बदलाव आया है। वाहनों की अधिक आवाजाही वाले क्षेत्रों में पेड़ों में कार्बन सोखने की क्षमता 36.75 फीसद कम पाई गई है। यह तथ्य देहरादून स्थित वन अनुसंधान संस्थान के ताजा शोध से सामने आया है। लैगेस्ट्रोमिया स्पेसियोसा नाम के पौधे पर यह अध्ययन किया गया। इसके लिए हरियाली से घिरे वन अनुसंधान संस्थान और वाहनों की अधिक आवाजाही वाली देहरादून की चकराता रोड का चयन किया गया। बाद में इन नतीजों का तुलनात्मक अध्ययन करने के बाद उपरोक्त स्थिति सामने आई। यह अध्यन संकेत दे रहा है कि इंसान ही नहीं, प्रदूषित वायु से पेड़-पौधे भी बीमार होने लगे हैं। इसलिए पर्यावरण को सुधारने के लिए चहुंमुखी प्रयास करने होंगे।

विदेशों से सीखना होगा

विदेश में आप जाकर देखें तो पाएंगे कि वहां के लोग हमसे ज्यादा पर्यावरण के प्रति सचेत हैं। आप चीन को ही देखें बीजिंग में जिस दिन रेड एलर्ट जारी होता है उन दिनों सारे स्कूल बंद हो जाते हैं। इस दौरान 80 प्रतिशत सरकारी कारों को सड़क से हटा दिया जाता है। मालवाहक वाहनों को उस दौरान रोक दिया जाता है। यहाँ प्रदूषण स्तर चिंताजनक होने पर स्थानीय सरकारों को जुर्माना देना पड़ता है। वर्ष 2005 में चीन में प्रदूषण भारत के मुकाबले बहुत अधिक था। इससे निपटने के लिए दोनों देशों ने अपने-अपने तरीके अपनाए। लेकिन आज दोनों देशों में वायु प्रदूषण की स्थिति बिल्कुल अलग है। चीन ने बीजिंग जैसे शहर में 2012 से 2017 के बीच में करीब 30 प्रतिशत प्रदूषण कम किया है। उसने 12वीं एवं 13 वीं पंचवर्षीय योजनामें राष्ट्रीय स्तर पर 'स्वच्छ हवा कार्यक्रम' बनाया तथा प्रांतीय स्तर पर भी प्रदूषण घटाने के लिए समयबद्ध लक्ष्य निर्धारित किये गये। वहां कोयला आधारित विद्युत संयंत्रों के लिए 2012 में नए उत्सर्जक मानक भी लाए गए थे जिससे कोयला क्षेत्र से प्रदूषण का उत्सर्जन कम हुआ और वायु प्रदूषण में प्रभावी कमी आयी। साथ ही देश तथा प्रांतीय स्तर पर कोयला उपभोग के लिए सीमा भी निर्धारित की गई, जिसके अनुसार मुख्य क्षेत्रों को अपने कोयला उपभोग को कम करना था। वहीं भारत में पिछले साल तक प्रदूषण को राष्ट्रीय समस्या भी नहीं माना जाता था। इसके चलते कोई भी ऐसा कदम नहीं उठाया गया जिससे प्रदूषण के स्तर में प्रभावी कमी लाई जा सके। भारत में जो भी कदम उठाए गए वह दिल्ली तक ही सीमित रहा। इसे एक नियमबद्ध तरीके और समय सीमा से लागू नहीं किया गया। यही वजह है कि दुनिया के सबसे प्रदूषित 14 शहर भारत के ही हैं। यहां एक बात और गौर करने की है कि भारत सरकार 2015 में कोयला आधारित विद्युत संयंत्रों के लिए नए उत्सर्जन मानक लेकर आयी थी जिसके अंतर्गत सभी संयंत्रों को दो साल के भीतर प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए नई तकनीक के प्रदूषण नियंत्रण उपकरण लगाने थे। लेकिन एक भी संयंत्र ऐसा नहीं है जिसने इन उत्सर्जन मानकों का पूर्ण रूप से पालन किया हो। बल्कि इसके विपरीत विद्युत संयंत्र इनका पालन करने के लिए पाँच साल का और समय मांग रहे हैं। भारत में जब वायु प्रदूषण को कम करने के लिए समयबद्ध नीति का ही पालन नहीं हो पा रहा तो इसका भविष्य कैसा होगा आप समझ सकते हैं।

बीजिंग में जिस दिन रेड एलर्ट जारी होता है उन दिनों सारे स्कूल बंद हो जाते हैं। इस दौरान 80 प्रतिशत सरकारी कारों को सड़क से हटा दिया जाता है। मालवाहक वाहनों को उस दौरान रोक दिया जाता है। यहां प्रदूषण स्तर चिंताजनक होने पर स्थानीय सरकारों को जुर्माना देना पड़ता है। वर्ष 2005 में चीन में प्रदूषण भारत के मुकाबले बहुत अधिक था। इससे निपटने के लिए दोनों देशों ने अपने-अपने तरीके अपनाए। लेकिन आज दोनों देशों में वायु प्रदूषण की स्थिति बिल्कुल अलग है। चीन ने बीजिंग जैसे शहर में 2012 से 2017 के बीच में करीब 30 प्रतिशत प्रदूषण कम किया है।

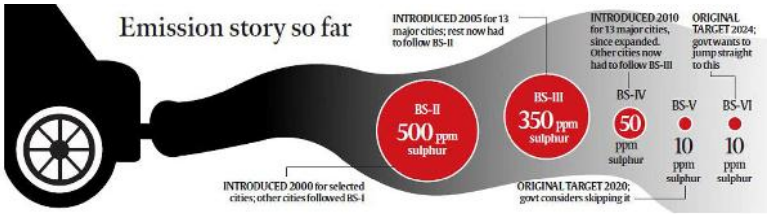

बढ़ती आबादी का असर

आज विश्व की जनसंख्या 8 अरब के करीब होने जा रही है। जब कि ईसा के जन्म के समय विश्व की अनुमानित जनसंख्या 1,000 लाख थी, जिसके 2030 तककरीब 8.16 अरब हो जाने की सम्भावना है। बढती जनसंख्या नगरीय परितंत्र के रुपान्तरण के लिए भी जिम्मेदार है। वर्तमान में तो यह एक नगरीय क्रांति सी दिखाई पड रही है। सारे संसार के लोग शहर की ओर पलायन करते नजर आ रहे हैं। 1800 ई में विश्व की जनसंख्या का केवल पाँच प्रतिशत ही शहरी आबादी थी, आज लगभग 54 प्रतिशत शहरी आबादी है। जैसे ही बडी संख्या में लोग शहरों में आकर बसने लगते हैं प्राकृतिक संसाधनो का दोहन होने लगता है। आवासीय इमारते बनने लगती हैं। जिससे प्रदूषण की संभावना और बढ़ जाती है। अवैध निर्माण एक दूसरी समस्या है जो कैंसर की तरह फैल रहा है।

आज देश का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं जहां किसी तरह का अवैध या अनियोजित निर्माण न हुआ हो। पहले तो सरकारी जमीनों में ही अवैध कब्जे और निर्माण होते थे, लेकिन अब निजी जमीनों पर भी अतिक्रमण के मामले बढ़ते जा रहे हैं। सरकारी अथवा गैरसरकारी जमीन पर अवैध निर्माण और अनियोजित विकास को रोकने की जिम्मेदारी स्थानीय निकायों, प्रशासन और अंततः राज्य सरकारों की होती है। कभी-कभी स्थानीय निकायों या जिला प्रशासन के अधिकारी अवैध निर्माण पर बुलडोजर चला देते हैं, लेकिन कुछ समय बाद ही फिर से पहले जैसी स्थिति हो जाती है। कई बार तो दो-चार दिन में ही रोका गया अवैध निर्माण फिर से शुरू हो जाता है। इसी तरह सरकारी जमीनों से हटाई गईं झुग्गियां फिर से बसने लगती हैं। धीरे-धीरे ये झुग्गियां बस्ती का रूप ले लेती हैं और फिर वहाँ नागरिक सुविधाएं प्रदान करने की मांग उठने लगती है। धीरे-धीरे ऐसी बस्तियों को नियमित करने की मांग उठने लगती है। फिर देर-सबेर इन बस्तियों को नियमित भी कर दिया जाता है, जबकि वे बेतरतीब और अनियोजित तरीके से बसाई गई होती हैं। ऐसी झुग्गी बस्तियां ही पर्यावरण को दूषित करती हैं। इन बस्तियों के चलते गंदगी और यातायात जाम जैसी समस्याएं उत्पन्न होती हैं। आज शहरी जीवन गाँव से कहीं अधिक समस्याओं से धिरा हुआ है। शहर में रहने वाले लोगों की सेहत भी प्रभावित हो रही है। दर असल शहरी जीवन दूषित होना सभी के लिए खतरे की घंटी है। भारतीय शहरों के दूषित होने की रफ्तार बढ़ रही है। फिर जरा सोचिए शहर के लोग कहाँ जाएंगे क्योंकि उनको गाँव में रहने की आदत नहीं है। इसलिए यह जरूरी हो गया है कि सभी लोग प्रदूषित होते देश को बचाए। स्वच्छ भारत में ही स्वस्थ लोग रहेगें। स्वच्छ वातावरण में हमारे बच्चों का भी भविष्य सुरक्षित रहेगा। अपने देश में जिस तरह हर तरफ अवैध निर्माण हो रहा है उससे यह नहीं लगता कि हम विकसित देश बनने के लक्ष्य को हासिल कर पाएंगे। आज आर्थिक तरक्की के मामले में भारत से कहीं पीछे खड़े देश शहरीकरण और नगर नियोजन के मामले में बेहतर स्थिति में हैं। वहां के गांवों और शहरों की व्यवस्था देखकर यही लगता है कि भारत में कोई इसकी परवाह नहीं कर रहा कि विकास और निर्माण का हर काम नियम-कानूनों के दायरे में होना चाहिए। इसीलिए हमारे छोटे-बड़े शहर बदरंग और बदहाल होते जा रहे हैं।

विकलांगता बढ़ा रहा प्रदूषण

पर्यावरण प्रदूषण प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों ही रूप से विकलांगता को जन्म दे रहा है। अनेक मामलों में आनुवांशिक विकृतियां होती हैं लेकिन वे इतनी प्रभावी नहीं होती हैं कि विकलांगता को जन्म दें। किंतु यदि पर्यावरण प्रदूषण भी प्रभावी हो जाए तो आनुवांशिक विकृतियां अंततः विकलांगता को जन्म देती है। वैसे इसकी उत्पत्ति तो आनुवांशिक कारणों से होता है लेकिन वायु प्रदूषण इसको और भड़का देता है। ऐसे में व्यक्ति की स्थिति विकलांगता तुल्य हो जाती है। लेकिन जैसे ही व्यक्ति अनुकूल जलवायु में जाता है उसकी स्थिति सामान्य होने लगती है। हालांकि पर्यावरण के कारण विकलांगता के अधिकांश मामले शैशवावस्था व बाल्यावस्था में प्रारंभ होते हैं पर अब वयस्क भी इससे अछूते नहीं रह गए हैं। यहां ध्यान देने वाली बात यह भी है कि गरीब तबका प्रकृति के अधिक निकट रहता है, इसलिए प्रकृति को होने वाले नुकसान का सर्वाधिक प्रभाव उन पर ही पड़ता है। प्रदूषण के कारण गर्मी भी बढ़ रही है। जलवायु परिवर्तन का सर्वाधिक प्रभाव उन फसलों पर पड़ रहा है जिसका उपयोग गरीब तबका अधिक करता है। इसलिए हम स्वस्थ जीवन बितायें तथा हमारी आने वाली संतानें भी स्वस्थ रहे, इसके लिए जरूरी है कि हम सभी पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचाएं।

vijankumarpandey@gmail.com

मौसम, मानसून और चक्रवात

डॉ विनीता सिंघल

डॉ.विनीता सिंघल ने जीवविज्ञान में डी-लिट और विज्ञान लोकप्रियकरण में एम.फिल किया है। वे तीस वर्षों तक विज्ञान प्रगति, साइंस रिपोर्टर जैसी विज्ञान पत्रिकाओं की सह-संपादक रहीं। सात सौ से अधिक मूल लेख एवं चालीस से अधिक किताबें लिखीं तथा बीस से अधिक पुस्तकों का संपादन एवं अनुवाद किया। आप राष्ट्रीय विज्ञान संचार एवं सूचना स्रोत संस्थान नई दिल्ली से सह-संपादक के पद से सेवानिवृत्त हुईं। आप दिल्ली में रहती हैं।

खेती के खराब हालात और किसानों की आत्महत्या की खबरों के बीच इस वर्ष देश में मानसून के सामान्य रहने का अनुमान है। मानसून के चार महीनों के दौरान 97 प्रतिशत बारिश होने का पूर्वानुमान मौसम विभाग ने जारी किया है। सामान्य तौर पर जून से सितम्बर के बीच 890 मिलीमीटर बारिश होती है। इस साल करीब 863 मिमी बारिश होने के आसार हैं। इसमें पाँच प्रतिशत कम या ज्यादा हो सकता है। देश में 60-65 प्रतिशत खेती मानसूनी बारिश पर निर्भर है। बेहतर मानसून अर्थव्यवस्था पर भी सीधा असर डालता है। मानसून आता है और बादल बरस कर ग्रीष्म ऋतु की भीषण गर्मी से राहत दिलाते हैं। ग्रीष्म मानसून का आगमन हमारे देश में दक्षिण-पश्चिम दिशा की ओर से होता है इसलिए यह 'दक्षिण-पश्चिम मानसून' कहलाता है। मानसून जल कणों से भरी वे हवाएं हैं जो गर्मियों में किसी महाद्वीप के विस्तृत भू-भाग के खूब तप जाने के कारण बने कम वायुमंडलीय दाब को भरने के लिए हिंद महासागर की ओर से आती हैं। यह मानसून भारत, बांग्ला देश और पाकिस्तान में वर्षा के लिए जिम्मेदार होता है।

इस समय मौसम सबसे बड़ी खबर बना हुआ है। सबसे पहले हमारा सामना उस तेज धूल भरी आंधी से हुआ, जिसने देश के एक बड़े हिस्से में कुछ ही घंटों के भीतर 150 से ज्यादा लोगों की जान ले ली। उसके बाद से खतरा लगातार बना हुआ था। मौसम विभाग लगातार खतरे की चेतावनियां जारी कर रहा था। जहां एक तरफ दिल्ली समेत उत्तर भारत के कई हिस्सों में सौ किलोमीटर प्रति घंटे से कहीं ज्यादा तेज गति की आंधियों में लोग जूझ रहे थे, तो वहीं पश्चिम बंगाल में आसमानी बिजली कहर ढा रही थी। ठीक उसी समय दूर दक्षिण भारत के आंध्र प्रदेश और तेलंगाना जैसे राज्यों में बिजली और तूफान ने नाक में दम कर रखा था। वैसे इस तरह की आंधियां या इस तरह से मौसम की अति कोई नई बात नहीं है। परेशानी यह है कि मौसम की इस तरह की अति लगातार दिख रही थी और इस बार यह सब अभूतपूर्व ढंग से बहुत ज्यादा हो रहा था। कहीं इसका कारण पश्चिमी विक्षोभ को बताया जा रहा था, तो कहीं इसका दोष कम दबाव के क्षेत्र को दिया जा रहा था। वैसे भारत ही नहीं, पिछले कुछ समय से पूरी दुनिया में मौसम इस तरह का तांडव कुछ ज्यादा ही दिखा रहा है। ज्यादातर वैज्ञानिक मानते हैं कि इसका कारण पर्यावरण का बदलाव यानी धरती के तापमान का बढ़ना है। अभी यह कहना थोड़ा मुश्किल है कि यह धरती बढ़ते तापमान से अपने तरीके से संघर्ष कर रही है और मौसम का बदलाव उसी का नतीजा है

या फिर धरती का मिजाज बदल जाने का नतीजा हम मौसम की अति के रूप में देख रहे हैं। कुछ भी हो, बदलाव तो हो रहा है और हमें उसके लिए खुद को तैयार करना शुरू कर देना चाहिए। पहली जरूरत तो यह है कि हम बढ़ते तापमान को रोकने के लिए कदम उठाएं। कार्बन उत्सर्जन का बढ़ना हम किसी तरह से रोक नहीं पाए हैं। इसके लिए तरह तरह के कदम भी सुझाए गए हैं, लेकिन सच यही है कि हुआ कुछ नहीं है।

मानसून के आगमन से पहले लगातार आ रहे आंधी तूफानों ने मौसम विभाग को चिंता में डाल दिया है। हालांकि मौसम विभाग ने कहा है कि अब तक के अनुभव बताते हैं कि इन तूफानों का मानसून पर कोई प्रभाव नहीं रहा है। लेकिन इस बार तूफानों की संख्या ज्यादा होने और विकराल होने के कारण स्थितियां बदल सकती हैं। आंधी तूफान की घटनाएं स्थानीय मौसमी गतिविधियों के आधार पर होती हैं। किसी पॉकेट में गर्मी ज्यादा होती है तो उसके परिणाम स्वरूप आंधी तूफान बनते हैं और कई मौसमी सिस्टम मिल जाने के कारण विकराल रूप धारण कर लेते हैं। आकलन बताते हैं कि इन घटनाओं का मानसून पर कोई प्रभाव नहीं देखा गया है।

हमारे देश में मौसम विज्ञान विभाग, कृषि उत्पादन को ध्यान में रखकर ग्रीष्मकालीन मानसून ऋतु के चार महीनों, जून से सितम्बर के दौरान होने वाली वर्षा का पूर्वानुमान लगाने के लिए पाँच मानदंडों का इस्तेमाल करता है। इसमें उत्तरी अटलांटिक और प्रशांत महासागरों का तापमान, दक्षिण भारत समुद्र में विषुवत रेखा के निकट के तापमान, पूर्वी एशिया में समुद्र के औसत तापमान, उत्तर पश्चिम यूरोप में सतह के वायु तापमान, प्रशांत महासागर में विषुवत रेखा के निकट समुद्र के पानी के गर्म तापमान को आधार बनाया गया है। पावर रिग्रेशन मॉडल नामक सांख्यिकी मॉडल का प्रयोग करके पूरे भारत में मानसून में कितनी वर्षा होगी, इसका पूर्वानुमान पहले अप्रैल और फिर जून में किया जाता है। कम्प्यूटर द्वारा मौसम संबंधी समीकरणों का प्रयोग करके मौसम पूर्वानुमान में सहायता प्राप्त की जाती है। पावर रिग्रेशन मॉडल में प्रशांत एवं अटलांटिक महासागरों के तापमान, वायुमंडलीय दाब तथा पवन वेग का प्रमुख योगदान है जिसमें अल नीनो का प्रभाव अंकित होता है।

आजकल आने वाले मौसम का पूर्वानुमान तीन प्रकार से लगाया जाता है। एक अनुमान आगामी 48 घंटों या उससे कम अवधि के मौसम के बारे में होता है; दूसरा आगामी 2 से 7 दिनों के मौसम के बारे मे और तीसरा आगामी एक सप्ताह से अधिक अवधि के लिए। यह दीर्घ अवधि एक पखवाड़ा, एक मास, एक ऋतु, एक वर्ष अथवा उससे भी अधिक हो सकती है। हमारे देश के लिए मानसून हवाएं, विशेष रूप से गर्मी की मानसून हवाएं, अत्यंत महत्वपूर्ण होती हैं। उनके ऊपर ही हमारी संपूर्ण आर्थिक व्यवस्था निर्भर है। इसलिए उनसे होने वाली वर्षा की मात्रा का पूर्वानुमान लगाना बहुत महत्वपूर्ण होता है।

भारत में मौसम विज्ञान विभाग प्रतिवर्ष अप्रैल माह में दीर्घकालीन मौसम का पूर्वानुमान प्रस्तुत करता है। उसके पश्चात मई और जून माह में प्राप्त मौसम के आंकड़ों के आधार पर दोबारा जून माह के अंत में दीर्घकालीन मौसम का पूर्वानुमान किया जाता है। इस वर्ष भी इनके आधार पर लगाए गए पूर्वानुमान के अनुसार, इस साल सामान्य बारिश होगी और पिछले साल से बारिश का स्तर ठीक रहेगा। इस वर्ष मानसून के सामान्य रहने की संभावना 42 प्रतिशत है। वहीं सामान्य से अधिक रहने की 12 प्रतिशत तथा अत्यधिक बारिश होने की दो प्रतिशत है। 96 से 102 प्रतिशत तक बारिश को सामान्य मानसून माना जाता है। 90 प्रतिशत से कम बारिश होती है तो देश के कई हिस्सों में सूखे के हालात बन जाते हैं और 110 प्रतिशत से ज्यादा बारिश हो तो बाढ़ के हालात बन जाते हैं यह भी अच्छा नहीं माना जाता। सबसे बड़ी बात कि इस बार अल नीनो तूफान के आसार नहीं

उत्तरी अटलांटिक और प्रशांत महासागरों का तापमान, दक्षिण भारत समुद्र में विषुवत रेखा के निकट के तापमान, पूर्वी एशिया में समुद्र के औसत तापमान, उत्तर पश्चिम यूरोप में सतह के वायु तापमान, प्रशांत महासागर में विषुवत रेखा के निकट समुद्र के पानी के गर्म तापमान को आधार बनाया गया है। पावर रिग्रेशन मॉडल नामक सांख्यिकी मॉडल का प्रयोग करके पूरे भारत में मानसून में कितनी वर्षा होगी, इसका पूर्वानुमान पहले अप्रैल और फिर जून में किया जाता है। कम्प्यूटर द्वारा मौसम संबंधी समीकरणों का प्रयोग करके मौसम पूर्वानुमान में सहायता प्राप्त की जाती है। पावर रिग्रेशन मॉडल में प्रशांत एवं अटलांटिक महासागरों के तापमान, वायुमंडलीय दाब तथा पवन वेग का प्रमुख योगदान है जिसमें अल नीनो का प्रभाव अंकित होता है।

दिखायी दे रहे हैं।

सर्दी के मौसम में देश का उत्तरी भू भाग ठंडा पड़ जाता है जबकि सागर की सतह का पानी अपेक्षाकृत गर्म रहता है। इसलिए उत्तरी भू भाग से ठंडी हवाएं सागर की ओर बहने लगती हैं। दक्षिण एशियाई मानसून प्रणाली भारतीय उपमहाद्वीप के लिए बेहद महत्वपूर्ण मानी जाती है। दक्षिण एशिया में मानसून प्रायः जून से सितम्बर तक सक्रिय रहता है। देश के उत्तरी और मध्य भाग के अथाह गर्मी से तप जाने के कारण वायुमंडलीय दाब बहुत कम हो जाता है। इसलिए उस खाली स्थान को भरने के लिए हिंद महासागर से जल कणों से भरी नम हवाएं तेजी से भारतीय उपमहाद्वीप की ओर बहने लगती हैं। ये हवाएं उत्तर में हिमालय की ओर खिंची चली जाती हैं। वहां हिमालय उन नम हवाओं को मध्य एशिया की ओर जाने से रोक देता है। ये नम हवाएं ऊपर उठती हैं। ऊपरी वायुमंडल में तापमान कम होने के कारण वर्षा की बूंदें बनने लगती हैं और फिर उन बूंदों से भरे बादल बरस पड़ते हैं।

अल नीनो के कारण बादलों में जल वाष्प के बढ़ने से दक्षिणी अमेरिका में अधिक वर्षा होने लगती है। इसका प्रभाव उत्तरी अमेरिका की अपेक्षा दक्षिणी अमेरिका पर अधिक होता है। दक्षिणी पूर्वी एशिया और उत्तरी ऑस्ट्रेलिया में अल नीनो के प्रभाव से शुष्क परिस्थिति उत्पन्न होने के कारण जंगली आग की घटनाएं बढ़ जाती हैं। यूरोप में अल नीनो के कारण शीत काल में नमी और बादल हो सकते हैं।

भारत में साल भर में कुल जितनी वर्षा होती है, उसका अस्सी प्रतिशत से भी अधिक मानसून की ही देन है। हमारे देश की अधिकांश खेती इसी वर्षा पर निर्भर करती है। अगर मानसून कमजोर हो तो सूखा पड़ सकता है। यदि मानसून ज्यादा बरसता है तो अतिवृष्टि के कारण बाढ़ आ सकती है। सितम्बर माह के आस-पास मानसून तेजी से वापस लौटने लगता है। ये लौटती हुई ठंडी, सूखी हवाएं बंगाल की खाड़ी से नमी लेकर दक्षिण भारत में बरसती हैं। इसे उत्तर पूर्वी मानसून कहते हैं। तमिलनाडु में साल भर में जितनी वर्षा होती है, उसका 50 से 60 प्रतिशत हिस्सा इसी लौटते हुए मानसून की देन होता है। दक्षिण भारत में अक्तूबर से दिसम्बर का समय इसी उत्तर पूर्वी मानसून का समय होता है।

वैज्ञानिकों के अनुसार दक्षिण पश्चिमी मानसून पर अल नीनो और ला नीनो की घटनाओं का भी असर होता है। उष्णकटिबंधीय पूर्वी प्रशांत महासागर की सतह का तापमान बढ़ जाने की घटना को अल नीनो कहते हैं। सतह का तापमान घट जाने की घटना ला नीनो कहलाती है। अल नीनो होने पर पश्चिमी प्रशांत महासागर में वायुमंडलीय दाब बढ़ जाता है और ला नीनो की स्थिति में वायुमंडलीय दाब घट जाता है। अल नीनो के कुछ संकेत इस प्रकार हैं जैसे हिंद महासागर में वायुमंडलीय दाब का बढ़ना, मध्य प्रशांत महासागर पर वायुमंडलीय दाब का घटना, दक्षिणी प्रशांत महासागर पर ट्रेड विंड्स का कमजोर होना या पूर्व की ओर मुड़ जाना, पश्चिमी प्रशांत महासागर तथा हिंद महासागर से गर्म समुद्री जल का पूर्वी प्रशांत महासागर की ओर बढ़ना। जब अल नीनो उत्पन्न होने लगता है तब पश्चिमी दिशा में चलने वाली नियमित ट्रेड विंड कमजोर होने लगती है और उनकी दिशा भी बदल जाती है। हवा में परिवर्तन होने के फलस्वरूप जो गर्म पानी ऑस्ट्रेलिया के पास समुद्र में होता है वही समुद्री सतह के पास भूमध्य रेखा के ऊपर उत्पन्न केल्विन तरंगों द्वारा फैलते हुए दक्षिणी अमेरिका के तटों तक पहुँच जाता है असाधारण रूप से समुद्र जल के कुंड के गर्म होने के कारण जल वाष्प बनने लगती है जिससे वर्षा के बादल बन जाते हैं। हवा की दिशा और वेग बदलने के कारण विश्वव्यापी मौसम के क्रम में बदलाव हो जाता है। अल नीनो की अवस्था में पश्चिमी प्रशांत महसागर में सामान्य अवस्था की अपेक्षा समुद्र तल घट जाता है।

अल नीनो के कारण बादलों में जल वाष्प के बढ़ने से दक्षिणी अमेरिका में अधिक वर्षा होने लगती है। इसका प्रभाव उत्तरी अमेरिका की अपेक्षा दक्षिणी अमेरिका पर अधिक होता है। दक्षिणी पूर्वी एशिया और उत्तरी ऑस्ट्रेलिया में अल नीनो के प्रभाव से शुष्क परिस्थिति उत्पन्न होने के कारण जंगली आग की घटनाएं बढ़ जाती हैं। यूरोप में अल नीनो

के कारण शीतकाल में नमी और बादल हो सकते हैं। भारत के मौसम वैज्ञानिकों ने भी भारतीय मानसून ऋतु की वर्षा पर अल नीनो के प्रभाव का अध्ययन किया है। अध्ययनों के दौरान मानसून की वर्षा सामान्य से कम पाई गई। इससे स्पष्ट है कि अल नीनो की अवस्था में भारत में सूखा पड़ने की संभावना अधिक होती है। परंतु यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक अल नीनो वर्ष में भारत में सूखा अवश्य पड़ेगा। किसी भी अल नीनो वर्ष में भारत में बाढ़ के संकेत नहीं मिले हैं। जून 2009 से भूमध्यीय प्रशांत महासागर में अल नीनो की अवस्था उत्पन्न हो गई थी। यही पिछले चार दशकों में भारत में सबसे बड़े सूखे का कारण बना। एक अमेरिकी एजेंसी ने पिछले वर्ष कहा था कि भारत में सूखा पड़ सकता है जिससे अकाल की स्थिति पैदा हो सकती है। ऐसा अल नीनो के कारण होगा। एजेंसी के अनुसार महासागर से कई बड़े तूफान उठने वाले थे जो मानसून को भटका सकते थे। अल नीनो के कारण कई बार मानसून की वर्षा में बहुत कमी देखी गई है।

जब मध्य प्रशांत में अल नीनो उत्पन्न होता है तो इसे असंगति अल नीनो कहते हैं। इसके प्रभाव से कई चक्रवात, अटलांटिक महासागर के तटों से अधिक टकराते हैं। इस अल नीनो का उत्सर्जन मानवीय कार्यों के कारण होने वाले जलवायु परिवर्तन से आंका गया है। चक्रवात वायुमंडल में एक बहुत ही कम दाब का क्षेत्र होता है जिसके बाहरी ओर अत्यंत तीव्र गति की हवाएं वृत्ताकार घूमती रहती हैं। चक्रवात को पूर्ण रूप से विकसित होने के लिए बहुत बड़ी मात्रा में ऊर्जा की जरूरत होती है और यह ऊर्जा प्राप्त होती है जल वाष्प की गुप्त उष्मा से। यह समुद्र के ऊपर उत्पन्न होते हैं जब समुद्र तल का तापमान लगभग 28 डिग्री सेल्सियस या उससे अधिक होता है। चक्रवात में वायु तेज गति से सर्पिलाकार घूमती हुई, ऊपर उठने लगती है। उसके बाहरी भाग में वायु का दाब बहुत अधिक होता है परंतु अंतरतम भाग में वहुत कम रहता है। इनसे घनघोर वर्षा, तूफानी समुद्री लहरें और तेज हवाओं के कारण बाढ़ आ जाती हैं अधिकतर चक्रवात भूमध्यरेखा के निकट उत्पन्न होकर उत्तर की ओर बढ़ते हुए उत्तरी गोलार्ध में पछुवा हवाओं के प्रभाव में मुड़ जाते हैं। ये सागर क्षेत्र में तीव्र गति से संचरण करते हुए स्थलीय क्षेत्रों में पहुँच कर कमजोर पड़ जाते हैं और जलवाष्प के अभाव में समाप्त हो जाते हैं। इन चक्रवातों का प्रभाव सर्वाधिक विनाशकारी होता है विशेषकर समुद्र तटीय क्षेत्रों तथा द्वीपों में क्षति अधिकतम होती है। चक्रवातों का पूर्वानुमान लगाना तो अब संभव हो गया है किंतु चक्रवात के तटीय क्षेत्रों तक पहुंचते ही इसके कारकों में सहसा होने वाले तीव्र परिवर्तनों के कारण इनका व्यवहार अप्रत्याशित हो जाता है जिसका पूर्वानुमान लगाना अभी संभव नहीं हो पाया है। वैसे अल नीनो के वर्षों में चक्रवातों की संख्या कम हो जाती है। चक्रवातों के विकास के बारे में एक बात महत्वपूर्ण बात यह है कि यदि ऊपर उठने वाली वायु में जल वाष्प की मात्रा पर्याप्त नहीं होती अथवा वायु बहुत ठंडी होती है तो यह प्रक्रिया आरंभ ही नहीं होती।

चक्रवात को पूर्ण रूप से विकसित होने के लिए बहुत बड़ी मात्रा में ऊर्जा की जरूरत होती है और यह ऊर्जा प्राप्त होती है जल वाष्प की गुप्त उष्मा से। यह समुद्र के ऊपर उत्पन्न होते हैं जब समुद्र तल का तापमान लगभग 28 डिग्री सेल्सियस या उससे अधिक होता है। चक्रवात में वायु तेज गति से सर्पिलाकार घूमती हुई, ऊपर उठने लगती है। उसके बाहरी भाग में वायु का दाब बहुत अधिक होता है परंतु अंतरतम भाग में वहुत कम रहता है। इनसे घनघोर वर्षा, तूफानी समुद्री लहरें और तेज हवाओं के कारण बाढ़ आ जाती हैं अधिकतर चक्रवात भूमध्यरेखा के निकट उत्पन्न होकर उत्तर की ओर बढ़ते हुए उत्तरी गोलार्ध में पछुवा हवाओं के प्रभाव में मुड़ जाते हैं।

पिछले कुछ दशकों में अल नीनो की संख्या में वृद्धि हुई है। जलवायु में तापमान की वृद्धि को औद्योगिक तथा मानवीय क्रियाकलापों के कारण उत्पन्न कार्बन-डाइ-ऑक्साइड और अन्य ग्रीन हाउस प्रभावों के संदर्भ में आंका जा रहा है। परंतु अल नीनो के प्रभाव का विभिन्न प्रकार के जलवायु के मॉडलों से अध्ययन किया जा रहा है। अल नीनो के पूर्वानुमान में उपग्रहों से विशेष सहायता प्राप्त हुई हैं ऐसे उपग्रहों से प्राप्त आंकड़ों का उपयोग पूर्वानुमान लगाने के लिए विभिन्न प्रकार के संसूचकों में किया जाता है। समुद्री क्षेत्र में अल नीनो के उत्पन्न होते ही वहाँ पर तेज हवाएं चलने लगती हैं, वायुमंडल में घनघोर बादल छाने लगते हैं और वर्षा होने लगती है। समुद्र तल में उस स्थान पर जल का स्तर ऊँचा होने लगता है। मानसून का पूर्वानुमान लगाने के प्रयास आदिकाल से ही किए जाते रहे हैं। यह हमेशा एक चुनौती रहा है। आज हमारे मौसम विज्ञान विभाग के पास भी मौसम संबंधी जानकारी उपलब्ध कराने के लिए आधुनिकतम सुविधाएं हैं। अब तो उपग्रह अन्य जानकारियों के साथ मौसम संबंधी जानकारियां भी निरंतर प्रेषित करते रहते हैं। मानसून की विसंगतियां एवं चरम घटनाएं कृषि, जल प्रबंधन एवं जान माल की हानि कर सकती हैं। इसलिए भारतीय ग्रीष्म मानसून के पूर्वानुमान की उपयोगिता काफी बढ़ जाती है। अब देश में मानसूनी वर्षा के सटीक और बेहतर पूर्वानुमान के लिए राष्ट्रीय मानसून मिशन की शुरूआत की गई है। इसके तहत मानसूनी बारिश, तापमान और मौसमी घटनाओं के पूर्वानुमान को बेहतर बनाने के प्रयास किए जा रहे हैं।

vineeta_niscom@yahoo.com

डार्क स्काई रिज़र्व क्षेत्र और प्रकाश प्रदूषण

विश्व स्तर पर प्रकाश प्रदूषण को नियंत्रित करने और खगोलीय स्थलों को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से नब्बे कां दशक से डार्क स्काई रिजर्व परम्परा की शुरुआत की गई है। डार्क स्काई रिज़र्व कृत्रिम रोशनी से पूरी तरह पृथक रखा जाता है। वास्तव में इसका उद्देश्य खगोलीय गणनाओं को बल प्रदान करना है। डार्क स्काई रिज़र्व एक ऐसा क्षेत्र होता है, जिसे कृत्रिम प्रकाश प्रदूषण के लिए प्रतिबंधित क्षेत्र के रुप में संरक्षित रखा जाता है।

डॉ. शुभ्रता मिश्रा

वनस्पति शास्त्र में शोध करने वाली डॉ. शुभ्रता मिश्रा युवा विज्ञान लेखिका हैं आपने इंडिया साइंस वॉयर, विज्ञान प्रसार में अब तक 350 विज्ञान कथा और लेख लिखे हैं। आपके विज्ञान लेख आकाशवाणी से प्रसारित होते रहे हैं। अंग्रेजी में पंद्रह तथा हिन्दी में पांच पुस्तकें लिखीं जिनमें 'भारतीय अंटार्कटिक संभारतंत्र' काफी चर्चित हुई है। इस किताब को राष्ट्रीय अंटार्कटिक एवं समुद्री अनुसंधान केन्द्र, पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित किया गया है। कई पुरस्कारों से सम्मानित डॉ. शुभ्रता गोवा में रहती हैं।

जीवन में प्रकाश के मायने सदैव सकारात्मक सोच की ओर ले जाने वाले रहे हैं। प्रकाश भौतिक और आध्यात्मिक दोनों ही रूपों में विश्व को अंधकार से मुक्ति दिलाने वाला माना गया है। एक आशा की किरण प्रकाश से ही प्रस्फुटित होती है, जो सफलताओं के शिखर पर जाकर निर्वाण पाती है। अर्थात् ऐसे शुभंकर प्रकाश के गुणों में यदि अशुभता के प्रतीक प्रदूषण के दुर्गुण होने की बात उठे, तो प्रारम्भ में विश्वास हो पाना बेहद कठिन होता है। लेकिन यह उतना ही कड़वा सच है कि प्रकाश भी अब मानवजनित गतिविधियों के कारण प्रदूषक की श्रेणी में आ गया है। वायु, जल, ध्वनि, मृदा, पर्यावरण के साथ-साथ अब प्रकाश प्रदूषण भी पिछले कुछ वर्षों से चिंता का विषय बनकर उभरा है।

प्रकाश प्रदूषण को अंग्रेज़ी में फोटो पॉल्यूशन या ल्युमिनस पॉल्यूशन का नाम दिया गया है। भारत के पड़ोसी चीन ने जब 23 जून, 2016 को तिब्बत स्वायत्त क्षेत्र के न्गारी प्रांत में अपना प्रथम डार्क स्काई रिजर्व बनाया, तो भारत के वैज्ञानिकों का ध्यान विशेष कौतुहल के साथ इस ओर गया। हालांकि अमेरिका और यूरोपीय देशों में प्रकाश प्रदूषण अस्सी के दशक से चर्चा का विषय बना हुआ है, क्योंकि वहाँ हुए औद्योगिक और शहरीकरण के विकास ने प्रकाशीय चकाचौंध में इतनी अधिक वृद्धि कर दी कि आकाशगंगा के सितारों को प्रकाश प्रदूषण का शिकार होना पड़ा।

विश्व स्तर पर प्रकाश प्रदूषण को नियंत्रित करने और खगोलीय स्थलों को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से नब्बे के दशक से डार्क स्काई रिजर्व परम्परा की शुरुआत की गई है। डार्क स्काई रिज़र्व को कृत्रिम रोशनी से पूरी तरह पृथक रखा जाता है। वास्तव में इसका उद्देश्य खगोलीय गणनाओं को बल प्रदान करना है। डार्क स्काई रिज़र्व एक ऐसा क्षेत्र होता है, जिसे कृत्रिम प्रकाश प्रदूषण के लिए प्रतिबंधित क्षेत्र के रूप में संरक्षित रखा जाता है। ऐसा क्षेत्र जिसे खगोल वैज्ञानिक अध्ययनों के लिए अलग रखा जाता है और जहाँ कृत्रिम प्रकाश प्रदूषण सबसे कम होता है। प्रायः इस तरह के क्षेत्र किसी खेल उद्यान, खेल संरक्षित क्षेत्र या वेधशाला के अंदर स्थित होते हैं। डार्क स्काई रिज़र्व क्षेत्र का निर्धारण क्षेत्र विशेष की सरकार या अन्य गैर-सरकारी संगठनों द्वारा किया जा सकता है। विश्व स्तर पर ऐसे कई संगठन हैं जो इन डार्क स्काई रिज़र्व क्षेत्रों को नामित करते हैं, जिनमें से सबसे पुराना

इंटरनेशनल डार्क स्काई एसोसिएशन (आईडीए) है।

इंटरनेशनल डार्क स्काई एसोसिएशन एक अमेरिकी गैर-लाभकारी संगठन है जिसे 1988 में दो अमेरिकी खगोलविदों, टिम हंटर और डेविड क्रॉफर्ड द्वारा स्थापित किया गया था। इंटरनेशनल डार्क-स्काई एसोसिएशन (आईडीए) द्वारा नामित डार्क स्काई प्रिसर्व्स को "इंटरनेशनल डार्क-स्काई प्रिसर्व्स" कहा जाता है। वर्तमान में, आईडीए ने प्रकाश प्रदूषण के क्षेत्र में अपनी वैश्विक पहचान बनाई है। इसके दुनियाभर के 70 देशों के 5,000 से अधिक सदस्य हैं। इस संगठन ने प्रकाश प्रदूषण के विरुद्ध वैश्विक स्तर पर मुहिम छेड़ रखी है और इस दिशा में यह एक अभूतपूर्व भूमिका निभा रहा है। यह डार्क स्काई पार्कों, रिजर्वों और सेंचुरियों को प्रमाणित करता है।

विश्व में कुल 53 आधिकारिक डार्क स्काई पार्क हैं। अधिकतर डार्क स्काई प्रिसर्व्स उत्तरी अमेरिका महाद्वीप में हैं, जिनमें से अधिकांश संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा में स्थित हैं। कनाडा में स्थित 4.48 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल वाला वुड बफेलो नेशनल पार्क सबसे बड़ा डार्क स्काई प्रिसर्व्स है। कनाडा के मिशिगन औरमाउंट मेगांटिक ऑब्जर्वेटरी क्षेत्र, पोलैंड-चेक गणराज्य सीमा पर स्थित आइजेरा डार्क-स्काई पार्क,स्लोवाकिया-चेक गणराज्य सीमा पर स्थितबेस्की डार्क-स्काई पार्क और यूक्रेन-स्लोवाकिया-पोलैंड सीमा पर स्थितईस्ट कार्पेथियन डार्क-स्काई ट्राइपार्क प्रमुख हैं। इनके अलावा ओराकी मैकेंज़ी (न्यूज़ीलैंड), ब्रेकन बीकॉन्स नेशनल पार्क (वेल्स), एक्समूर नेशनल पार्क (इंग्लैंड), केरी डार्क स्काई रिजर्व (आयरलैंड), मूर्स रिजर्व (साउथ डाउन, इंग्लैंड), नामीबरेंडनैचर रिजर्व (नामीबिया), पिक डू मिडि (फ्रांस), हॉन (जर्मनी), स्नोडोनिया नेशनल पार्क (वेल्स) और वेस्टहेवेलैंड (जर्मनी) भी प्रमुख वैश्विक डार्क स्काई रिसर्व्स हैं। इसी तरह इंटरनेशनल डार्क स्काई एसोसिएशन (आईडीए) द्वारा उटाह स्थित नेचुरल ब्रिजेज़ नेशनल मोन्यूमेंट को पहला अंतरराष्ट्रीय डार्क स्काई पार्क घोषित किया गया है।

विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में नामित किए गए आधिकारिक डार्क स्काई संरक्षित क्षेत्रों को बोर्टल स्केल (पैमाने)के आधार पर 1 से 9 श्रेणियों के तहत वर्गीकृत किया जाता है। बोर्टल स्केल का नामकरण प्रसिद्ध खगोलविदजॉन ई बोर्टलके नाम पर किया गया है। 2001 में "स्काई एंड टेलीस्कॉप" पत्रिका में पहली बार ये पैमाने प्रकाशित हुए थे। वैज्ञानिक प्रकाश प्रदूषण की जाँच के लिए बोर्टल स्केल द्वारा ही रात में आकाश में अंधकार का मापन करते हैं। अत्यंत निम्न प्रकाश प्रदूषण वाले डार्क स्काई क्षेत्र क्षेणी-1 में आते हैं, जबकि प्रकाश प्रदूषण से अत्यधिक ग्रसित क्षेत्रों को श्रेणी-9 के अन्तर्गत रखा जाता है। श्रेणी-9 में ज्यादातर चकाचौंध से भरे बड़े-बड़े शहर आते हैं। विश्व के अधिकांश डार्क स्काई प्रिसर्व्स बोर्टल स्केल श्रेणी-1 से श्रेणी-5 के बीच आते हैं। आयरलैंड के केरी इंटरनेशनल डार्क-स्काई प्रिसर्व्स को छोड़कर, श्रेणी-1 में आने वाले डार्क स्काई प्रिसर्व्स कनाडा में स्थित हैं।

इंटरनेशनल डार्क-स्काई एसोसिएशन (आईडीए) द्वारा दी गई परिभाषा के अनुसार आकाशीय दीप्ति, चमक, अतिप्रकाशीय स्थिति, प्रकाश अव्यवस्था, रात्रिकालीन न्यूनदृश्यता और ऊर्जाक्षति जैसे कारकों युक्त कृत्रिम प्रकाश का पर्यावरण पर पडने वाला प्रतिकूल प्रभाव प्रकाश प्रदूषण है। इस परिभाषा में प्रकाश स्वयं प्रदूषक की भांति कटघरे में खड़ा है, वहीं प्रकाश द्वारा प्रदूषण फैलाने की प्रक्रिया में भी वह शामिल है। प्रकाश स्वयं प्रदूषित होकर एक ओर आकाश में अंधकार और खगोलीय संरचनाओं के अस्तित्व को ललकार रहा है, वहीं पर्यावरण, प्रकृति और उसके पादपों-जीवों की जीवनचर्या को दूभर बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ रहा है। प्रकाश प्रदूषण ने आकाश में तारों को हमसे और दूर कर दिया है। अब दिन में ही नहीं वरन रात में भी तारे नजर नहीं आते। प्रकाश प्रदूषण को

रात्रि में प्रकाश से चौधियाता एक शहर

इंटरनेशनल डार्क-स्काई एसोसिएशन (आईडीए) द्वारा दी गई परिभाषा के अनुसार आकाशीय दीप्ति, चमक, अतिप्रकाशीय स्थिति, प्रकाश अव्यवस्था, रात्रिकालीन न्यूनदृश्यता और ऊर्जाक्षति जैसे कारकों युक्त कृत्रिम प्रकाश का पर्यावरण पर पडने वाला प्रतिकूल अभाव प्रकाश प्रदूषण है। इस परिभाषा में प्रकाश स्वयं प्रदूषक की भांति कटघरे में खड़ा है, वही प्रकाश द्वारा प्रदूषण फैलाने की प्रक्रिया में भी वह शामिल है। प्रकाश स्वयं प्रदूषित होकर एक और आकाश में अंधकार और खगोलीय संरचनाओं कां अस्तित्व को ललकार रहा है, वही पर्यावरण, नीति और उसके पादपों-जीवों की जीवनचर्या को दूभर बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ रहा है।

रात्रि में प्रकाश प्रदूषण

समझने की शुरुआत इसी तथ्य से हुई थी, जब सन 1980 में एक वैश्विक डार्क स्काई मूवमेंट पूरी धरती को प्रकाश प्रदूषण से बचाने के उद्देश्य से सामने आया था। उस समय यह बात स्पष्टतौर पर दिखी थी कि उत्तरी अमेरिका, यूरोप और जापान के उच्च औद्योगिक एव घनी आबादी वाले क्षेत्र कृत्रिम प्रकाश की चकाचौंध से अपने प्राकृतिक रात्रिकालीन आकाश को नष्ट कर रहे हैं। मध्य-पूर्व और उत्तरी अफ्रीका के प्रमुख शहरों जैसे तेहरान और काहिरा में भी इसी तरह की गंभीर स्थिति प्रेक्षित की गई थी। इसका सीधा सीधा कारण समझ में आ रहा था कि औद्योगिक और वाणिज्यिक प्रतिस्पर्धा ने अपने अस्तित्व की पराकाष्ठा के लिए प्रकाश को मोहरा बना लिया है।

विभिन्न शोधों से औसत तौर पर एक बात सामने आई है कि प्रतिवर्ष विश्व में प्रकाश प्रदूषण तीव्रता से लगातार बढ़ रहा है। शोधकर्ताओं के अनुसार एक ओर जहाँ सन् 1992-2013 के दौरान प्रकाश प्रदूषण में दो प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई थी, वहीं दूसरी ओर जर्नल ऑफ साइंस एडवांसेज में प्रकाशित कनाडा में भौतिक विज्ञानी क्रिस्टोफर किबा के एक अन्य शोध के अनुसार 2012 से 2016 के मध्य मात्र चार वर्षों में यह वृद्धि 2.2 प्रतिशत प्रतिवर्ष मापी गई है इस शोधपत्र में यह दर्शाया गया है कि अकेले भारत में यह दर 7.4 प्रतिशत थी। ये आंकड़े दर्शाते हैं कि दुनिया के बड़े-बड़े शहरों में दिन और रात अपना अस्तित्व खो चुके हैं, क्योंकि वहां सावन के अंधे की तरह सिर्फ प्रकाशीय हरियाली ही बिछी पड़ी है। रोशनी की चौबीसों धण्टे की चकाचौंध ने प्रकृति के पौधों, पक्षियों, पशुओं और मनुष्यों की जैविक घड़ी को बुरी तरह अव्यवस्थित कर दिया है। वहीं ब्रह्माण्ड भी अपने खगोलीय चक्र को असंतुलित करता जा रहा है। प्रकाश प्रदूषण को तीन स्तरों पर भलीभांति समझा जा सकता है। प्रथम स्तर पर इसके खगोलीय विचलन, द्वितीय स्तर पर इसके पादप प्रक्रियाई विक्षोभ और तीसरे स्तर पर मानव सहित अन्य प्राणियों के जीवन पर मंडरा रहे संकटों का विवेचन किया जा सकता है।

प्रकाश प्रदूषण खगोलीय पिण्डों को सबसे अधिक चुनौती देने वाला प्रदूषण साबित होता जा रहा है। वायु प्रदूषण के कारण विभिन्न पर्यावरणीय संस्तरों में एरोसोलों और अन्य वायु प्रदूषकों की उपस्थिति ने एक धुंध सा स्थापित कर दिया है। अतिरोशनी सम्पन्न शहरों में रात में जब कृत्रिम प्रकाश की आंखों को चौंधिया देने वाली प्रकाशीय किरणें इस धुंध में प्रवेश करके वातावरण में पहुंचकर परावर्तन, अपवर्तन और विकीर्णन की प्रकाशीय प्रक्रियाओं से गुजरकर वापस पृथ्वी पर आती हैं, तो उनकी आभा किसी चमत्कृत ब्रह्माण्डीय प्रक्रिया की मानिंद पूरी पृथ्वी को रात्रि में उसके प्राकृतिक प्रकाश से लगभग 5-8 गुना आलोकमय कर देती है। इससे साधारण रुप में दिखने वाले तारे भी विलीन से हो जाते हैं। कुछ जगहों पर तो यह चमक 25-50 गुना तक अधिक आंकी गई है। यहाँ भले ही भौतिकविद अपनी भौतिकी के रेले प्रभाव से लेकर पुर्किन्जे प्रभाव और खगोलीय वेधशालाएं प्रकाशीय विकिरण के सतत् उत्सर्जन से लेकर सौर फोटोन ऊर्जाओं और उनकी आयनीकरण क्षमता को रात्रिकालीन आकाश में विपर्यास सीमाओं और आकाश-प्रदीप्ति की संवेदनशीलताओं में मापन कर पा रहे हों, लेकिन चिरसत्य सिर्फ और सिर्फ यही है कि प्रकाश प्रदूषण ने आकाशीय तारामण्डलीय प्रतिदीप्ति को परास्त कर दिया है। सूर्य की गतिविधि और सौर चक्र पर आधारित दूरस्थ सितारों और आकाशगंगा की प्रकाशीय उज्ज्वलता और पृथ्वी के आकाशीय अंधकार में हो रही क्षीणता वैश्विक प्रकाश प्रदूषण का दृश्य साक्षी कहे जा सकते हैं।

दूसरे स्तर पर पादप जगत पर प्रकाश प्रदूषण का गहरा प्रभाव पड़ रहा है। पादपों का उनकी प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया के कारण सौर प्रकाश से सीधा संबंध होता है। प्रकाश संश्लेषण वह प्रक्रिया है जिसमें प्रकाश ऊर्जा रासायनिक ऊर्जा में बदल जाती है। प्रकाश की ऊर्जा का उपयोग करके पौधे कार्बन डाइऑक्साइड और जल से शर्करा जैसे कार्बोहाइड्रेट

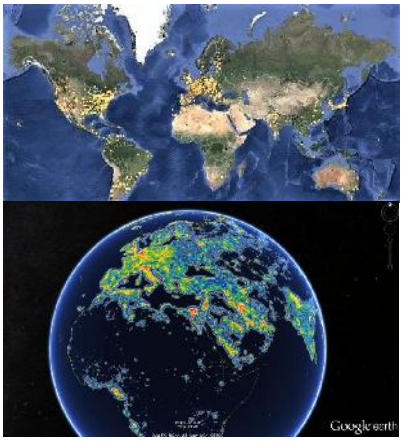

लासा ब्ल्यू मारबल नेवीगेटर

भले ही भौतिकविद अपनी भौतिकी के रेले प्रभाव से लेकर पुर्किन्जे प्रभाव और खगोलीय वेधशालाएं प्रकाशीय विकिरण के सतत् उत्सर्जन से लेकर सौर फोटॉन ऊर्जाओं और उनकी आयनीकरण क्षमता को रात्रिकालीन आकाश में विपर्यास सीमाओं और आकाश-प्रदीप्ति की संवेदनशीलताओं में मापन कर पा रहे हैं, लेकिन चिरसत्य सिर्फ और सिर्फ यही है कि प्रकाश प्रदूषण ने आकाशीय तारामण्डलीय प्रतिदीप्ति को परास्त कर दिया है। सूर्य की गतिविधि और सौर चक्र पर आधारित दूरस्थ सितारों और आकाशगंगा की प्रकाशीय उज्ज्वलता और पृथ्वी के आकाशीय अंधकार में हो रही क्षीणता वैश्विक प्रकाश प्रदूषण का दृश्य साक्षी कहे जा सकते हैं।

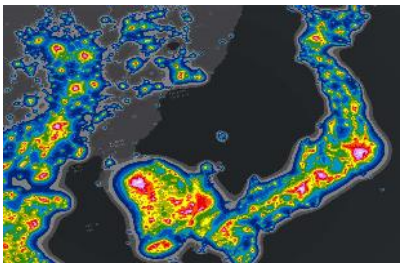

भूमण्डलीय प्रकाश प्रदूषण को दर्शाता मानचित्र

का संश्लेषण करते हैं। प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया को सबसे अधिक प्रभावित करने वाला कारक प्रकाश भले ही हो, परन्तु अप्रकाशीय प्रक्रियाओं के लिए अंधकार भी उतना ही महत्व रखता है। कृत्रिम प्रकाशों ने रात को भी दिन बना दिया है, इसलिए पौधों को सूर्यप्रकाश भले ही रात में न मिल रहा हो लेकिन प्रकाश की निश्चित तरंगदैर्घ्य अवश्य ही अन्य संश्लेषी प्रक्रियाओं की क्रमबद्धता पर असर डालती हैं। इसके अलावा प्रकाश और अंधकार के उचित अनुपात के अभाव में पुष्पन प्रक्रिया भी प्रभावित होती है, जिसका अप्रत्यक्ष प्रभाव फलोत्पादन पर भी पड़ सकता है। पादपों पर इस कृत्रिम प्रकाश के पड़ने वाले प्रभाव पर अभी बहुत कम जानकारी उपलब्ध है। इस विषय पर शोध की बहुत आवश्यकता है, जिससे भविष्य में प्राथमिक उत्पादकों की जैविक प्रक्रियाओं को यथोचित समझा जा सके।

तीसरे स्तर पर प्रकाश प्रदूषण से मानव सहित समस्त प्राणिजगत प्रभावित हो रहा है। प्रकाश प्रदूषण ने पूरी धरती के दिवस-रात्रि के प्राकृतिक विन्यास को विचलित कर दिया है। इस विचलन का नकारात्मक प्रभाव विशेष रूप से कीट प्रजातियों, उभयचरों और रात्रि में जागरण करने वाले पक्षी समुदायों की जैविक प्रक्रियाओं पर स्पष्ट देखने में आ रहा है। उनकी निषेचन और प्रजनन क्षमताएं क्रमशः कम होती जा रही हैं। कीटों, मछलियों, समुद्री कछुओं, मेंढकों, चमगादड़ों, चिड़ियों और अन्य प्राणियों की प्रवासन प्रक्रिया भी प्रभावित हो रही है। जीएफजेड जर्मन रिसर्च सेंटर फॉर जियोसाइंसेज के शोधकर्ताओं ने अपने शोध में पाया है कि प्रकाश प्रदूषण जैव पारिस्थितिकी तंत्र पर बेहद हानिकारक प्रभाव डाल रहा है। इससे प्राणियों और मानवों की नींद लेने की प्राकृतिक प्रक्रिया प्रभावित हो रही है। पशुओं में व्यग्रता और पक्षियों की मृत्यु दर बढ़ रही है। मनुष्यों में प्रकाश प्रदूषण से हो रही निरंतर जीर्ण दैनिक दिनचर्या, निद्रा और हार्मोनल व्यवधान के कारण सिर दर्द, थकान, तनाव, चिंता में वृद्धि, दृष्टि बाधा, रेटिना हानि, निम्न शुक्राणु उत्पादन, आनुवंशिक उत्परिवर्तन। स्तन कैंसर होने की सम्भावनाएं बढ़ी हैं।

छोटे से बड़े स्तर पर आवश्यकतानुसार प्रकाश स्रोतों का इस्तेमाल सबसे सटीक हल हो सकता है। घरों और बाहरी क्षेत्रों में अनावश्यक प्रकाश व्यवस्था ही इस प्रदूषण का मूल कारण है। यदि पृथ्वी पर प्रत्येक जीवन को बचाए और बनाए रखना है, तो व्यक्तिगत स्तर पर पहल सबसे बड़ी आवश्यकता है। वैज्ञानिकों ने नासा ब्लू मार्बल नेविगेटर या ग्लोब एट इंटरैक्टिव लाइट पलूशन मैप तैयार किए हैं, जिनके प्रयोग से आम जागरुक व्यक्ति भी इस बात का पता लगा सकता है कि किसी क्षेत्र विशेष में प्रकाश प्रदूषण का स्तर कितना है।

प्रकाश प्रदूषण से बचाव के हल भी खोजे जा रहे हैं। खगोलीय अध्ययनों को सुविधाजनक बनाने के लिए आकाश में सितारों और आकाशगंगाओं के बीच की विपर्यास सीमा को कम करने के लिए ऐसी नई दूरबीनें तैयार की जा रही हैं, जिनमें संकीर्ण-बैंड वाले नेबुला फिल्टरों का उपयोग करके मात्र विशिष्ट तरंगदैर्घ्य वाले प्रकाश के माध्यम से आकाशगंगाओं और आकाशीय नीहारिकाओं के अध्ययन किए जा सकें। वैज्ञानिकों का मानना है कि सितारों की तुलना में आकाशगंगाएं और निहारिकाएं प्रकाश प्रदूषण सेअधिक प्रभावित होती हैं। इसके अलावा सामान्यतौर पर अब न्यूनतम तीव्रता वाले प्रकाश विकल्प तैयार किए जा रहे हैं। सभी देशों को अपनी प्रकाश व्यवस्था योजनाएं कानूनी आधार पर निर्धारित करनी होंगी।

छोटे से बड़े स्तर पर आवश्यकतानुसार प्रकाश स्रोतों का इस्तेमाल सबसे सटीक हल हो सकता है। घरों और बाहरी क्षेत्रों में अनावश्यक प्रकाश व्यवस्था ही इस प्रदूषण का मूल कारण है। यदि पृथ्वी पर प्रत्येक जीवन को बचाए और बनाए रखना है, तो व्यक्तिगत स्तर पर पहल सबसे बड़ी आवश्यकता है। वैज्ञानिकों ने नासा ब्लू मार्बल नेविगेटर या ग्लोब एट इंटरैक्टिव लाइट पलूशन मैप तैयार किए हैं, जिनके प्रयोग से आम जागरुक व्यक्ति भी इस बात का पता लगा सकता है कि किसी क्षेत्र विशेष में प्रकाश प्रदूषण का स्तर कितना है।

हालांकि प्रकाश प्रदूषण के विषय में जानकारी रख लेना ही पर्याप्त नहीं होगा, वरन उसके उन्मूलन के प्रयास भी उतने ही मायने रखते हैं। इसके लिए व्यक्तिगत स्तर लोगों को अपने अपने घरों की रोशनियों को रात के समय कम से कम रखना होगा। इसके अलावा ऊर्जा बचाने वाले बल्बों, मोशन डिटेक्टर और टाइमर वाले प्रकाश स्रोतों का उपयोग लाभकारी साबित हो सकता है। समय रहते सचेत नहीं हुए तो इसमें कोई संदेह नहीं कि ब्रह्माण्ड को ऊर्जा देने वाला प्रकाश, असतोमाज्योतिर्गमय का संदेश देने वाला प्रकाश पृथ्वी पर समस्त जैविक और अजैविक कारकों के लिए भविष्य में घातक हो सकता है। अतः प्रकाश के संयमित प्रयोग से समृद्धि, सुरक्षा और निश्चितता प्राप्त की जा सकती है।

shubhrataravi@gmail.com

विज्ञान की अद्भुत शाखा

कैओस सिद्धांत

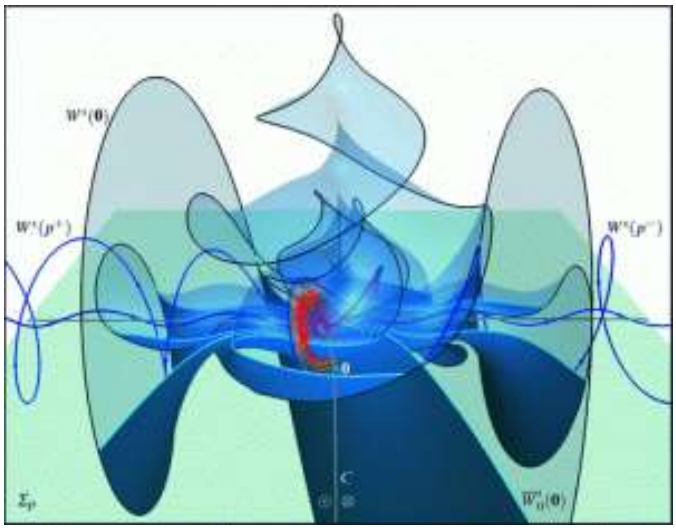

प्रदीप

प्रदीप एक साइंस ब्लॉगर एवं विज्ञान संचारक हैं। ब्रह्मांड विज्ञान, विज्ञान के इतिहास और विज्ञान की सामाजिक भूमिका पर लोकोपयोगी लेख लिखने में विशेष रूचि है। ज्ञान-विज्ञान से संबंधित आपके लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं।

वैज्ञानिक सिद्धांतों विशेषकर आइजैक न्यूटन और अल्बर्ट आइंस्टाइन के सिद्धांतों की सफलता ने एक कठोर नियतत्ववाद (Rigid determinism) की शुरुआत की, जिसके अनुसार यदि हम प्रकृति के नियमों से वर्तमान में भलीभांति परिचित होंगे तो सैद्धांतिक रूप से ब्रह्मांड में भविष्य में घटित होने वाली किसी भी घटना की सफल भविष्यवाणी करने में सक्षम होंगे। उदाहरण के लिए यदि हम किसी समय विशेष पर सौरमंडल के ग्रहों की गति और स्थिति को जानतें हों तो हम बड़ी सटीकता से यह भी भविष्यवाणी कर सकते हैं कि एक वर्ष उपरांत ग्रहों की स्थिति और गति क्या होगी। इस नियतत्ववाद को तब बड़ा झटका लगा जब वर्नर हाइजेनबर्ग ने क्वांटम यांत्रिकी के एक महत्वपूर्ण पहलू, अनिश्चितता -सिद्धांत की खोज की। परमाण्विक स्तर पर यह सिद्धांत कहता है कि हम किसी कण की स्थिति और उसके संवेग को एक साथ नहीं जान सकते। उदाहरण के लिए यदि हम यह जानना चाहते हैं कि परमाणु के भीतर किसी कण की क्या स्थिति है, तो कण की स्थिति जानने के लिए हमें उस पर प्रकाश (फ़ोटॉन) फेंकना पड़ेगा। जब फोटॉन उस कण से टकरायेंगे तब उस टक्कर के परिणाम स्वरूप कण की स्थिति और अवस्था परिवर्तित हो जाएगी। इस तरह हम उसकी स्थिति को नहीं जान पाएंगे क्योंकि स्थिति को जानने के क्रम में हमने स्थिति में परिवर्तन कर दिया। क्वांटम भौतिकी में हम किसी कण के कहीं पर होने का पूर्वानुमान लगाने का प्रयास तो कर सकते हैं मगर सटीकता से यह नहीं बता सकते कि वह कहाँ पर हैं। वह कहीं पर भी हो सकता है।

परंतु, यदि हमें किसी कण या पत्थर की स्थिति, उसका संवेग, वायु का घनत्व, उसका वेग, पृथ्वी द्वारा लगाया गुरुत्वाकर्षण बल आदि सब कुछ पता हो और हम उस पत्थर को अंतरिक्ष से पृथ्वी पर फेंक दें तो क्या हम पत्थर के कहीं पर भी गिरने से पहले ही सटीकतापूर्वक यह बता सकते हैं कि वह पत्थर कहाँ पर गिरेगा? सैद्धांतिक रूप से हाँ, मगर हम व्यवहारिक रूप से बिलकुल सटीकतापूर्वक नहीं बता सकते की पत्थर यहीं पर गिरेगा क्योंकि छोटी प्रारंभिक अनियमिता और अनिश्चितता भी पत्थर की गति, स्थिति आदि को प्रभावित करके हमारी भविष्यवाणी को निरर्थक और अव्यवहारिक सिद्ध कर सकती है। ठीक इसी प्रकार से आज हम ग्रहों की गति और स्थिति की भविष्यवाणी करने में सक्षम हैं, मगर लंबे अर्से के लिए नहीं, हम यह नहीं बता सकते कि आज से पाँच हजार वर्ष बाद सूर्य, पृथ्वी और अन्य ग्रहों की क्या स्थिति होगी। हम जानते हैं कि क्वांटम यांत्रिकी

यादृच्छिकता (Randomness) का प्रतीक है, इसलिए आइंस्टाइन ने इसे 'पासा लुढ़काने वाला सिद्धांत' कहा था। परंतु पत्थर का फेंकना या ग्रहों की भविष्यवाणी एक स्थूल (विशाल) पैमाने से संबंधित है, जिसे न्यूटन और आइंस्टाइन की भौतिकी को संभालने में सक्षम होना चाहिए। वास्तव में, यह काफी अच्छी तरह से संभालता भी है। मगर, आधुनिक गणित और विज्ञान की एक शाखा 'कैओस सिद्धांत' चिरसम्मत भौतिकी की भविष्यवाणी संबंधी सीमाओं को इंगित करती है। इस सिद्धांत के अनुसार अतिसूक्ष्म परिवर्तन भी बड़े पैमाने पर किसी क्रिया के परिणाम को प्रभावित कर सकता है। आज हम देखतें हैं कि किस प्रकार से अधिकांश मौसम की भविष्यवाणियाँ या पूर्वानुमान गलत साबित हो जाते हैं, फिर भी हम मौसम विज्ञान क्षेत्र की निंदा नहीं करते और न ही बेकार अनुमान लगाने के सिद्धांत के रूप में इसे खारिज कर देते हैं। बल्कि हम यह मानते हैं कि यह एक अपूर्ण विज्ञान है, यह तो केवल हमे किसी विशेष परिणाम (जैसे बारिश होगी या नहीं होगी) की संभावना को ही बताता है। दशकों पहले की तुलना में, आज पूर्वानुमान बहुत बेहतर हैं। मगर, प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में चाहें कितनी भी प्रगति हो जाए 'कैओस सिद्धांत' के अनुसार मौसम की भविष्यवाणी कभी भी पूरी सटीकता के साथ नहीं की जा सकेगी।

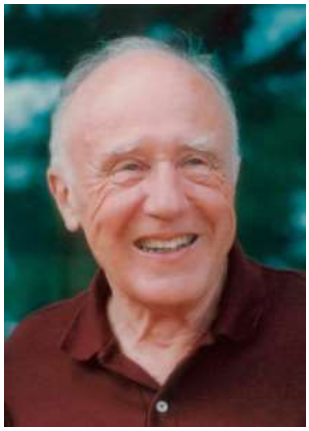

क्या है कैओस सिद्धांत?

1960 के दशक के आरंभिक वर्षों में मौसम विज्ञान के एक प्रोफेसर एडवर्ड लोरेंज अपने कम्प्यूटर द्वारा मौसम का पूर्वानुमान लगाने की कोशिश कर रहे थे। उस समय मौसम को तापमान, दबाव, और वायु वेग जैसे मापने योग्य कारकों के समुच्चय (Set) द्वारा निर्धारित किया जाता था, तत्कालीन पारंपरिक ज्ञान यह था कि एक ठोस मॉडल, डेटा का पूरा समुच्चय और एक शक्तिशाली संख्या-संकुचन उपकरण द्वारा मौसम की सफल भविष्यवाणी की जा सकती है। लोरेंज अपने शोधकार्य के दौरान यह देखकर चकित रह गए कि प्रारंभिक स्थितियों में नगण्य बदलाव भी व्यापक रूप से भिन्न परिणाम देता है। दूसरे शब्दों में, छोटी प्रारंभिक अनिश्चितता और संख्यात्मक गणनाओं में निकटतम त्रुटि भी व्यापक रूप से मौसम के मिजाज़ को प्रभावित करती है।

प्रारंभिक स्थितियों की इस अत्यधिक निर्भरता या संवेदनशीलता को लोरेंज द्वारा 'तितली प्रभाव' नाम दिया गया। इसका अभिप्राय यह है कि एक जटिल प्रणाली में एक स्थान पर एक छोटा-सा भी बदलाव दूसरे स्थान पर बड़ा प्रभाव उत्पन्न कर सकता है, उदाहरण के लिए, यदि एक तितली अमेज़न के जंगलों में अपने पंख फड़फड़ाती है तो इसकी वजह से टेक्सास में तूफ़ान आ सकता है। वास्तव में, हम यह जानते हैं कि एक तितली के पंख फड़फड़ाने से कहीं भी तूफ़ान नही आ सकता, मगर इस कथन का मूल अर्थ यह है कि किसी भी सिस्टम (प्रणाली) में एक बेहद मामूली बदलाव भी क्रियाओं की उन श्रृंखलाओं को जन्म दे सकता है, जो उस सिस्टम के भविष्य को पूरी तरह बदल देगी। लोरेंज और अन्य वैज्ञानिकों ने इस परिघटना का नेतृत्व किया, जिसको बाद में 'कैओस सिद्धांत' (Chaos Theory) के रूप में व्यापक समर्थन मिला। इस सिद्धांत के बारे में एडवर्ड लोरेंज ने संक्षेप कहा था : 'जब वर्तमान स्थिति भविष्य को निर्धारित करता है, लेकिन अनुमानित वर्तमान भविष्य का निर्धारण नहीं करता है'। इस वजह से किसी भी व्यवहार और गतिविधि की दीर्घकालिक स्थिति की भविष्यवाणी करना असंभव है। यह हमें अजीब लग सकता है, मगर वास्तव में कैओस सिद्धांत के अंतर्गत ऐसे ही व्यवहारों, गतिविधियों और प्रणालियों का अध्ययन किया जाता है जिनका पूर्वानुमान लगाना या जिन पर नियंत्रण करना असंभव है, जैसे कि मौसम और जलवायु, शेयर बाजार, विभिन्न प्रकार की खगोलीय गतिविधियाँ और हमारे मस्तिष्क की स्थितियां आदि।

कैओस सिद्धांत के आरंभिक समर्थकों में से एक थे महान गणितज्ञ हेनरी पॉइंकारे,

इस सिद्धांत के बारे में एडवर्ड लोरेंज ने संक्षेप कहा था : 'जब वर्तमान स्थिति भविष्य को निर्धारित करता है, लेकिन अनुमानित वर्तमान भविष्य का निर्धारण नहीं करता है'। इस वजह से किसी भी व्यवहार और गतिविधि की दीर्घकालिक स्थिति की भविष्यवाणी करना असंभव है। यह हमें अजीब लग सकता है, मगर वास्तव में कैओस सिद्धांत के अंतर्गत ऐसे ही व्यवहारों, गतिविधियों और प्रणालियों का अध्ययन किया जाता है जिनका पूर्वानुमान लगाना या जिन पर नियंत्रण करना असंभव है।

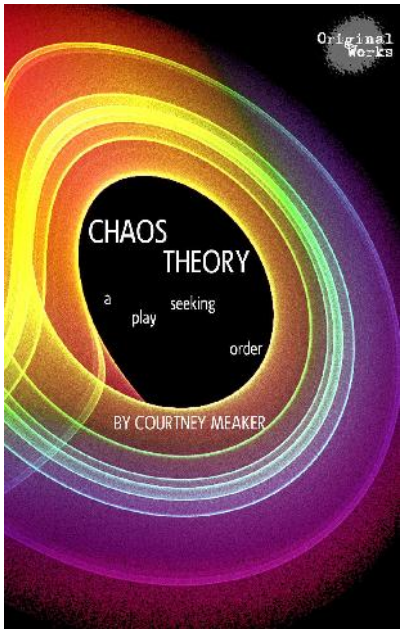

'कैओटिक लाइट हार्वेस्टिंग' जैसे नवीनतम अनुसंधानों से यह भी पता चला है कि कैओस सिद्धांत संबंधी हमारी यह आम धारणा कि यह उपकरणों की कार्य-क्षमता को कम कर देती है, सदैव सच नहीं होती। जैसे-जैसे तकनीक और विकसित होगी उपकरणों की कार्य-क्षमता में भी बढ़ोत्तरी होगी। हालाँकि कैओस सिद्धांत के अनुसार भविष्य में भी, किसी भी प्रणाली में अत्यंत सूक्ष्म कारक की अज्ञानता या थोड़ी-सी अनिश्चितता भी हमारे पूर्वानुमान को गलत सिद्ध कर देगी।

$$X_{t+1} = kx_t(1 - x_t)$$

कैओस सिद्धांत का समीकरण

जिन्होंने बीसवी सदी के आरंभ में ही एडवर्ड लोरेंज का मार्गदर्शन करते हुए कहा था कि प्रारंभिक स्थिति में हो रही छोटी सी असमानताएं भी अंतिम घटना में बहुत बड़ी असमानता उत्पन्न कर सकती है। प्रारंभिक स्थितियों के प्रति संवेदनशीलता का अभिप्राय यह है कि एक कैओटिक प्रणाली में प्रत्येक बिंदु, अलग-अलग भविष्य के पथों की बिंदुओं द्वारा अनुमान लगाया जाता है। इस प्रकार, वर्तमान प्रक्षेपवक्र में एक छोटे (नगण्य) परिवर्तन से भविष्य के व्यवहार में भिन्नता हो सकती है। प्रारंभिक स्थितियों के प्रति संवेदनशीलता का एक परिणाम यह है कि अगर हम किसीप्रणाली (सिस्टम) के बारे में कुछ कम जानकारी के साथ कार्य करना शुरू करते हैं तो एक निश्चित समय के बाद सिस्टम का पूर्वानुमान लगाना असंभव हो सकता है। यह सिद्धात मौसम विज्ञान के मामले में सर्वाधिक परिचित है, जो आमतौर पर केवल एक हफ्ते तक का पूर्वानुमान लगा सकता है। दरअसल, किसी भी कैओटिक प्रणाली में, पूर्वानुमान लगाने की अनिश्चितता बीते समय के साथ तेजी से बढ़ जाती है।

अनुप्रयोग

'कैओस' शब्द का अर्थ है भ्रम, अनिश्चितता, अराजकता और अनियमितता। चूँकि अराजक या अनिश्चित व्यवहार कई प्राकृतिक प्रणालियों (जैसे, मौसम और जलवायु) और कृत्रिम घटकों या सामाजिक व्यवहारों (जैसे, सड़क यातायात या अनियंत्रित भीड़) में मौजूद है, इसलिए कैओस सिद्धांत विश्लेषणात्मक तकनीकों के माध्यम से इनका अध्ययन करता है। अतः कैओस सिद्धांत वर्तमान में वैज्ञानिक अनुसंधान का एक सक्रिय क्षेत्र बना हुआ है।

कैओस सिद्धांत का जन्म मौसम के पैटर्न देखने से हुआ था, लेकिन वर्तमान में यह कई अन्य स्थितियों पर लागू हो गया है। कैओस सिद्धांत का इन क्षेत्रों में व्यापक अनुप्रयोग हो रहा है : भूविज्ञान, गणित, सूक्ष्म जीव विज्ञान, जीव विज्ञान, कम्प्यूटर विज्ञान, अर्थशास्त्र, इंजीनियरिंग, एल्गोरिथम ट्रेडिंग, पारिस्थिति की, मौसम विज्ञान, दर्शन, नृविज्ञान, भौतिकी, राजनीति, जनसंख्या गतिशीलता, डीएनए कम्प्यूटिंग, मनोविज्ञान, रोबोटिक्स आदि।

'कैओटिक लाइट हार्वेस्टिंग' जैसे नवीनतम अनुसंधानों से यह भी पता चला है कि कैओस सिद्धांत संबंधी हमारी यह आम धारणा कि यह उपकरणों की कार्य-क्षमता को कम कर देती है, सदैव सच नहीं होती। जैसे-जैसे तकनीक और विकसित होगी उपकरणों की कार्य-क्षमता में भी बढ़ोत्तरी होगी। हालाँकि कैओस सिद्धांत के अनुसार भविष्य में भी, किसी भी प्रणाली में अत्यंत सूक्ष्म कारक की अज्ञानता या थोड़ी-सी अनिश्चितता भी हमारे पूर्वानुमान को गलत सिद्ध कर देगी। कैओस सिद्धांत निश्चितता और अनिश्चितता के बीच परिवर्तन को खोजता है। हम यह कह सकते हैं कि कैओस सिद्धांत मानव जाति के लिए अत्यंत लाभप्रद है। इसका एक सामान्य उदाहरण यही दिया जा सकता कि वर्तमान में मनोवैज्ञानिक व मनोचिकित्सक मन-मस्तिष्क की बीमारियों के चिकित्सीय अध्ययन के लिए इस सिद्धांत का उपयोग कर रहे हैं क्योंकि इससे मरीज की प्रारंभिक स्थिति का पता लगाकर उसका यथोचित ईलाज किया जा सकता है। इस प्रकार हम यह देखते हैं कि क्वांटम यांत्रिकी के साथ-साथ प्रकृति, कृत्रिम घटकों और सामाजिक व्यवहारों में भी सूक्ष्म मगर प्रभावी रूप से यादृच्छिकता मौजूद है। अगर आइंस्टाइन जीवित होते तो कैओस सिद्धांत के बारे में कुछ इस प्रकार से टिप्पणी करते : 'ईश्वर एक से अधिक तरीकों से पासा फेंकता है'।

pk110043@gmail.com

विज्ञान कथा

अनोखा उपहार

प्रज्ञा गौतम

प्रज्ञा गौतम ने विगत वर्षों में तेजी से विज्ञान लेखन में अपनी पहचान बनाई है। आपने विज्ञान प्रगति तथा विज्ञान कथा में नियमित लेखन किया। आपने बॉटनी में स्नातकोत्तर तक शिक्षा प्राप्त की तथा विज्ञान शिक्षक के रूप में अपना कॅरियर शुरू किया। वैज्ञानिक आधार पर लेखन करने में आपको महारत हासिल है। गहरी वैज्ञानिक दृष्टि और साहित्यिक अभिरुचि के चलते आपकी रचनाएँ मुक्ता, अहा जिंदगी, कादम्बिनी आदि में प्रकाशित हुई हैं। वर्तमान में आप कोटा, राजस्थान में निवासरत हैं।

शाम सात बजे से ही मेहमान आने शुरू हो गए थे। मेहमान और कोई नहीं, डॉ. सचिन के खास मित्र थे। शहर के बाहरी भाग में स्थित उनके बँगले के लॉन में इस छोटी सी पार्टी का आयोजन था।

युवा वैज्ञानिक सचिन कुछ दिनों पहले ही अमेरिका से लौटे थे। एक दुर्लभ और लाइलाज कैंसर का वैक्सीन बनाने में उन्होंने सफलता अर्जित कर ली थी, इसी सिलसिले में वे अपना शोध-पत्र पढ़ने अमेरिका गए थे। वे यहाँ दिल्ली में कार्यरत थे। पत्नी अदिति, पुणे में सॉफ्टवेयर ईंजीनियर थी।

उनको यह बँगला लिए अधिक समय नहीं हुआ था। इससे पहले वे युनिवर्सिटी के कैम्पस में स्थित क्वार्टर में रहते थे। बँगले में आने के कुछ दिनों बाद ही अदिति का ट्रांस्फर पुणे हो गया था। बेटी को भी हॉस्टल में रखना पड़ा। उनके अधिकांश मित्रों ने यह घर नहीं देखा था, अपनी सफलता की खुशी में यह पार्टी उन्होंने बँगले पर ही रखी ताकि सभी मित्र नया घर देख लें।

लॉन में हल्की रोशनी की की व्यवस्था थी। पार्श्व में धीमा-धीमा पाश्चात्य संगीत बज रहा था। सचिन के दोनों नौकर, शंकर और उमेश मेहमानों के स्वागत में तत्पर थे। अखिल और शैलेश जो, सचिन के अधीन शोध कर रहे थे, जल्दी आ गए थे और पार्टी की व्यवस्था देख रहे थे। सचिन सबसे हाथ मिलाकर गर्म जोशी के साथ मिल रहे थे।

"बधाई हो सचिन" डॉ. रमाकान्त ने उन्हें गले लगा लिया था, मिसेज रमाकांत हाथों में बड़ा सा गुलदस्ता लिए खड़ी थीं।

"अदिति और परी नज़र नहीं आ रहे सचिन?"

"अदिति सुबह की फ्लाइट से आने वाली थी लेकिन, एन वक्त पर एक प्रोजेक्ट आ गया। अब दोनों माँ-बेटी सप्ताहांत में ही आएंगी।"

"उनके बिना तो पार्टी फीकी रहेगी।"

"वो तो है मैडम, पर आप आयी हैं तो रौनक हो ही जाएगी। वाह! क्या सुगंध है।" सचिन ने उनके हाथ से गुलदस्ता थामते हुए कहा।

"और, कीर्ति को नहीं लाये मैडम?"

"कीर्ति की तबियत ठीक नहीं थी, फिर भी आयी है। आपकी छात्रा है आपको नाराज़ नहीं कर सकती।"

"इस ड्रेस में तो कीर्ति को पहचानना मुश्किल है।" सचिन खुल कर हँस पड़े। कीर्ति ने नजरें झुका लीं। वह रमाकांत सर के पड़ोस में रहती थी और शोध-छात्रा थी।

उनके ज्यादातर सहकर्मी, सपत्नीक ही आए थे। अधेड़ आयु के प्रो.शुभांकर अपनी युवा और सुंदर पत्नी के साथ आए थे। यह उनका दूसरा विवाह था।

सभी मेहमान आ चुके थे। जूस, कोल्ड ड्रिंक्स और स्नेक्स परोसे जा रहे थे। प्रो. विनायक और रघुरामन सबसे आखिर में आए तो सचिन बोल पड़े, "तुमने बहुत विलंब

कर दिया विनायक हर कार्य धीमी गति से करते हो। पिछले पाँच वर्षों से शोध कर रहे हो और अभी तक कोई परिणाम नहीं। यहाँ हमें प्रतीक्षा करवा रहे हो।" सचिन के कटाक्ष से वह तिलमिलाकर रह गया।

"यूँ हीं कहीं उलझ गया था।" कृत्रिम मुस्कराहट के साथ उसने उत्तर दिया।

नौकरों ने मेहमानों के लाए उपहार और गुलदस्ते अंदर हॉल में रख दिए थे। अखिल के उपहार को देखकर सचिन दंग रह गए थे, "यह क्या अखिल? न मैं शराब पीता हूँ, न इस पार्टी में इसका कोई आयोजन है।" "पता है सर, पर यह बहुत पुरानी और क्लासिक शैंपेन है। संग्रहणीय! कभी विदेशी मेहमान आए तो काम आ सकती है।"

"अच्छा विचार है।" सचिन की आँखों में चमक कौंध गई।

महिलाओं ने अलग समूह बना लिया था।

"अदिति की अनुपस्थिति में यह कुछ ज्यादा ही चहकता है।" डॉ.शुभ्रा ने व्यंग्य भरी मुस्कराहट के साथ कहा।

"अच्छा!" मिसेज रमाकांत के चेहरे पर आश्चर्य के भाव थे।

"कीर्ति के शोध-पत्रों पर साइन नहीं कर रहा है। कई बार उसको घर आमंत्रित कर चुका है पर वह नहीं गई।" बड़ी अदा से जूस के गिलास को होठों से लगाते हुए शुभ्रा ने रहस्य खोला। "रमाकांत जी की तो इस पर विशेष कृपा है।" सुधा व्यंग्य से हँस दी। मिसेज रमाकांत को चेहरा विकृत हो गया था। उन्हें ऐसी बातों की ना जानकारी थी न दिलचस्पी। वह वहाँ से उठ गई।

सचिन मित्रों से घिरे बैठे थे। हँसी-मजाक और ठहाकों की आवाज से, रात्रि के एकांत में बिंदु सा दृष्टिगोचर होता वह बँगला रोशनी और जीवंतता से भर उठा था। अमेरिका-यात्रा और अन्य वैज्ञानिकों द्वारा पढ़े हुए शोध-पत्रों की बातें चल निकली थीं। पर विनायक चुप-चुप ही था।

"विभा नज़र नहीं आ रही विनायक?" मिसेज रमाकांत ने पूछा तो उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

"इनकी शादी टूट चुकी है।" रामन ने यथासंभव धीमी आवाज़ में कहा पर सचिन ठहाका लगाकर जोर से हँस पड़े।

"हाऽऽ हाऽऽ हा शैंपेन तो अब विनायक के काम आएगी।"

"मुझे अपमानित करने बुलाया है सचिन तुमने?" विनायक का चेहरा लाल हो गया था। सभी लोग उन दोनों की तरफ देखने लगे थे।

"सचिन की यह बड़ी सफलता है, विनायक। यह दिन नाराजगी के लिए नहीं है।" रमाकांत सर बोले।

"जी, सर।" उसने धीरे से कहा। मेज पर खाना लग गया था।

शैलेश ने सुझाव दिया कि भोजन के पहले एक दौर नृत्य का हो जाना चाहिए।

युवा लोग संगीत पर थिरकने लगे जबकि सीनियर प्रोफेसर बैठे हुए नृत्य और संगीत का आनंद ले रहे थे।

"आप भी नृत्य का आनंद लीजिए मैडम।"

सचिन ने मिसेज शुभांकर को हाथ पकड़ कर उठाते हुए कहा। प्रो. शुभांकर को अच्छा नहीं लगा था। "नीति, बैठो तुम।"उन्होंने कड़कती हुई आवाज़ में कहा।

"सचिन, कुछ तो लिहाज करो। तुम से बहुत सीनियर हूँ मैं।" सचिन ने माफी माँग ली थी पर उनका मूड उखड़ा हुआ ही रहा।

बाहर सर्दी तेज हो गई थी। कीर्ति को बुखार चढ़ने लगा तो मिसेज रमाकांत उसको अंदर हॉल में ले गईं।

"तुम यहीं बैठो, तुम्हारा खाना मैं अंदर ही भिजवा दूँगी।"

कीर्ति हॉल की सज्जा देख कर दंग रह गई थी, "अदभुत!" हॉल की दीवारों पर भारतीय एंव पाश्चात्य कलाकारों की कलाकृतियाँ लगी थीं। आदमकद मानव आकृतियाँ, जैसे बोल पड़ेंगी, दीवारों पर उकेरी हुईं थी। कोने में लकड़ी की मेज पर ईरानी शैली का बड़ा सा धातु का कलात्मक पात्र रखा था। शंकर ने गुलदस्ते उस पात्र में सजा दिए थे। मेज पर ही शैपेन की बोतलें और अन्य उपहार रखे थे। कमरे में एक ओर डाइनिंग टेबल और दूसरी ओर सोफा और दीवान थे। वहीं एक अलमारी भी थी जिसमें पुस्तकें रखी थीं।

उसे मानवाकृतियाँ, डरावनी और घूरती हुई सी प्रतीत हुईं। शंकर भोजन ले आया था। थोड़ा सा खाकर वह सोफे पर आँखें बंद करके बैठ गई।

थोड़ी देर बाद अखिल कॉफी लेकर अंदर आया। बाहर सब भोजन कर चुके थे।

"कॉफी पी लो कीर्ति और साथ में दवा भी ले लो।"अखिल की आवाज से चौंक कर उसने आँखें खोल दीं।

"ओह! तुम हो। मैं तो डर गई थी। बड़ी अजीब सज्जा है इस कमरे की। सुदंर पर डरावनी भी, किसी पुराने महल की तरह।"

"हाँ, सचमुच।"अखिल कलाकृतियों को छूकर देखने लगा।

"सर कई बार बुला चुके मुझे पर मैंने टाल दिया।" वह बोली।

"बहुत अच्छा किया। आदतें ठीक नहीं हैं सर की।"

"तुमने सुनी वह बात, कीर्ति?"

"क्या?"

"सब जगह एक अफवाह है, ...शैलेश भी कुछ बताना चाह रहा था। कल मिला था।"

"बताओ तो....." अखिल की बात अधूरी रह गई।

पार्टी के मेहमान, बँगला देखने अंदर आ गए थे। सचिन बड़े उत्साह से घर दिखा रहे थे। वे दोनों भी अंदर चले गए।

रात्रि के ग्यारह बज रहे थे। सचिन मेहमानों को छोड़ने मुख्य द्वार तक आए।

"बँगला बहुत एकांत में लिया तुमने इंसान तो कम ही नज़र आते होंगे यहाँ।" कोई बोला था।

"पर पेड़ बहुत हैं यहाँ और ऑक्सीजन भी।" सचिन अपने परिचित अंदाज में हँस पड़े। "पर सारी ऑक्सीजन तो वे डरावनी आकृतियाँ ले लेती होंगी, सर।" कीर्ति बोल पड़ी।

''क्यों शैलेश?"

"हाँ, हाँ" शैलेश ने बाहर देखते हुए कहा तो सब हँसने लग गए।

लॉन से सामान समेट कर शंकर और उमेश भी चले गए।

सचिन काफी थक गए थे। वे अपनी पसंदीदा पुस्तक निकाल कर दीवान पर लेट गए। पुस्तक पढ़ते-पढ़ते ही उनकी आँख लग गई।

सुबह सात बजे शंकर आया तो देखा, साहब ने मुख्य द्वार का ताला नहीं खोला था। समाचार पत्र वहीं पड़ा हुआ था। उसको आश्चर्य हुआ। रात्रि में देर से सोने के बावजूद सचिन जल्दी उठ जाते थे। प्रातःकालीन भ्रमण के बाद वो वहीं लॉन में बैठ कर समाचार-पत्र पढ़ते, तब तक सात बज जाते। शंकर आकर उनको चाय देता और घर अवस्थित करता। उमेश, चार बजे तक आता था। वह नाश्ता और खाना बनाता।

घर की एक चाबी शंकर के पास होती थी। उसने मुख्य द्वार का ताला किसी तरह मुश्किल से खोला। समाचार पत्र वहाँ से उठाकर वह हॉल का दरवाजा खटखटाने लगा। काफी देर तक दरवाजा खटखटाने के बावजूद भी दरवाजा नहीं खुला तो वह एकमात्र पड़ोसी वर्मा जी को बुला लाया। बहुत बल प्रयोग करने पर भीतर वाली सिटकनी किसी तरह खिसकी और दरवाजा खुला।

सचिन आँख बंद करके पलंग पर लेटे थे। मुँह खुला था। वक्ष पर उपन्यास रखा था। वर्मा जी ने हाथ लगाकर देखा, सचिन का शरीर ठंडा पड़ चुका था। नब्ज गायब थी और श्वास बंद। उनका चेहरा फक्क पड़ गया।

"ही इज नो मोर।"

पुलिस को सूचना दे दी गई। शंकर ने अदिति मैडम को घटना के बारे में बताया।

पुलिस ने सचिन के घर को घेर लिया था। सूचना पाकर सभी मित्र एंव सहकर्मी आ गए थे।

फोरेंसिक विभाग की टीम आयी थी। उन्होंने कमरे की वस्तुओं पर से हाथों के निशान लिए। कोने की मेज पर उपहार और खाली शैंपेन की बोतलें थीं। कलात्मक पात्र में बुके रखे हुए थे, पात्र में एक भूरे से रंग का द्रव था। कमरे से नमूने एकत्रित करके टीम चली गई।

पुलिस दोनों नौकरों से पूछताछ कर रही थी।

"शंकर, साफ-साफ बताओ पार्टी वाली रात क्या हुआ था?"

"सब कुछ ठीक था साहब। सचिन सर अच्छे मूड में थे नाच-गाना सब हुआ।"

"पार्टी के दौरान कोई विशेष बात हुई हो?"

"पार्टी में विनायक सर थोड़ा नाराज़ हो गए थे। सर की मजाक का उन्होंने बुरा मान लिया था। और तो कुछ विशेष नहीं हुआ।"

"साहब, शुभांकर सर को भी गुस्सा आ गया था जब सचिन सर उनकी मैडम के साथ डांस करने लगे।" उमेश ने कहा।

"यानि.... पार्टी में तनातनी भी हो गई। कैसा स्वभाव था तुम्हारे सचिन सर का?"

"अच्छा था साहब। बहुत हँसमुख थे सबसे प्रेम से मिलते थे।"

"और ये शराब की बोतलें? क्या पार्टी में शराब का आयोजन था?"

"नहीं साहब, वो तो अखिल भैया उपहार में लाए थे।"

"फिर ये खाली कैसी हुईं? बोलो, जवाब दो?" इंसपेक्टर ने कड़कती आवाज में पूछा तो शंकर सहम गया।

"म....मुझे नहीं मालूम साहब, कैसे खाली हुईं।"

"कौन-कौन गया था बँगले के अंदर?"

"सभी गए थे साहब, बँगला देखने.....पर अखिल और कीर्ति पहले से वहाँ थे।"

"ओह!.....सभी परिचित आ गए हैं पर.....अखिल नहीं आया है।"

अखिल घर पर नहीं था। घरवालों ने बताया कि वह किसी कार्य से लखनऊ गया है। उसका फोन भी नहीं लगा।

शाम तक अदिति और परी भी आ गए थे। अदिति को संभाल पाना मुश्किल था। मिसेज रमाकांत, कीर्ति और शैलेश उन्हें दिलासा दे रहे थे। "मेरे पति युवा और स्वस्थ थे उन्हें कोई व्यसन भी नहीं था। वो ऐसे कैसे जा सकते हैं।"

"आप धैर्य रखें मैडम, हम पूरी जाँच करेंगे कि उनकी मृत्यु प्राकृतिक है या हत्या?" इंस्पेक्टर ने सांत्वना देते हुए कहा।

बॉडी को पोस्टमार्टम के लिए भिजवा दिया गया था। पुलिस पार्टी में आए परिजनों से पूछताछ कर रही थी। "क्यों विनायक साहब, कैसे नाराज हो गए थे आप पार्टी में?"

"बहुत अहंकार हो गया था सचिन को अपनी सफलता का जबकि वह इतना प्रतिभाशाली कभी नहीं रहा। मेरा मित्र था, मैं शुरू से उसको जानता हूँ। पार्टी में उसने मेरा मजाक उड़ाया तो मुझे क्रोध आ गया था। पर सर, उसकी मृत्यु से मेरा कोई संबंध

नहीं है। मित्रों में तो इस तरह चलता रहता है।"

"सफलता के नशे में वह यही भी भूल गया था कि मैं उसका सीनियर हूँ। उसको पढ़ाया है मैंने। पर जो हुआ बहुत बुरा हुआ।" शुभांकर बोले।

"और अखिल से कैसे रिश्ते थे उनके?"

"ठीक ही थे। अखिल शोधार्थी छात्र था, अपने अधीन शोध करने वाले छात्र-छात्राओं को परेशान करने के आरोप लगते रहे हैं उस पर। पर, पता नहीं इनमें कितनी सच्चाई है।" विनायक बोला।

पोस्टमार्टम की रिपोर्ट आ गई थी। कुछ भी असामान्य नहीं आया था। शरीर में कोई विश नहीं था। किसी प्रकार के चोट के निशान भी नहीं थे। मृत्यु संभवतः दम घुटने से हुई थी। पार्टी वाली रात, कीर्ति ने जो मजाक किया था जैसे वह सच हो गया था।

सुबह नौ बजे पुलिस अखिल के घर पर थी। अखिल लखनऊ से लौट आया था। दरवाजे पर पुलिस देखकर बोला।

"पता लगा सचिन सर की डेथ के बारे में कुछ?"

"आपने ही सचिन की हत्या की है मि. अखिल। चलिए पुलिस स्टेशन।"

"मैंने क्या किया?" अखिल घबरा गया था।

"पहले पुलिस स्टेशन चलो, वहीं सब बताना।"

"तुम्ही शैंपेन की बोतलें लेकर गए थे सचिन जी की पार्टी में।"

"जी, सर।"

"क्या था उन बोतलों में?"

"सर, शैंपेन ही थी।"

"झूठ बोलते हो।" इंस्पेक्टर ने सख्ती से पूछा।

"नहीं सर, यकीन कीजिए उनमें शैंपेन ही थी।"

"उनमें शैंपेन नहीं थी मि. अखिल, कुछ और था, चल कर खुद देखो।"

अखिल को उस कमरे में ले जाया गया जहाँ वे बोतलें रखी थीं। वे खाली थीं पर उनके मुँह पर भूरा सा पदार्थ लगा था। बोतल के अंदर की दीवारों पर भी वही भूरा पदार्थ दिखायी दे रहा था।

अखिल की आँखें आश्चर्य से फटी रह गईं।

"यह पदार्थ तो शैंपेन नहीं है और ये बोतलें खाली कैसे हुईं?"

"इन बोतलों का द्रव फ्लावर पॉट में उँढेला गया था, अखिल।"

"अब तुम सब सच-सच बता दो।"

अखिल ने बोतल को हाथ में लेकर ध्यान से देखा। "सर, ये मेरी लायी हुई बोतलें हैं ही नहीं। वे तो बहुत पुरानी थीं। मेरा एक मित्र यूरोप से लाया था। उसने मुझे भेंट की थीं। ये मेरे किसी काम की नहीं थीं तो मैंने सोचा सचिन सर को उपहार में दे दूँ, उनके काम आ सकती हैं। उनको शौक भी था पुरातन और अजीबोगरीब वस्तुओं के संग्रह का। इन बोतलों के डिजाइन में भी थोड़ा अंतर है।"

"अखिल, तुमने इन बोतलों के बारे में किसी को बताया था?"

"हाँ, सर।"

पुलिस ने दोनों नौकरों और आमंत्रित अतिथियों से एक बार फिर पूछताछ की। पुलिस अब एक नतीजे पर पहुँच चुकी थी।

कौन था सचिन का हत्यारा?

शाम सात बजे पुलिस शैलेश के घर पहुँच गई। "मि. शैलेश हम पूरी तहकीकात के बाद आए हैं। तुम्हें अपनी सफाई में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। तुम सिर्फ यह बता दो कि तुमने सचिन जी कि हत्या क्यों की?"

"हाँ, मैं ही उनकी मौत का जिम्मेदार हूँ।" शैलेश रो पड़ा था।

"यह कैंसर की वैक्सीन मेरी मेरी तीन वर्षों की मेहनत का परिणाम था परन्तु सचिन सर ने इसका सम्पूर्ण श्रेय खुद ले लिया था रिसर्च पेपर पर कहीं मेरा नाम नहीं था। मैं बहुत दुखी और निराश था पार्टी के एक दिन पहले मैं अखिल के यहाँ गया तो अखिल ने मुझे शैंपेन की बोतलें दिखायी थीं और पूछा था कि सचिन सर के लिए यह उपहार कैसा रहेगा? तभी मेरे दिमाग में यह भयानक विचार आया।"

मैंने वैसी ही शैंपेन की बोतलें खरीदी। उनकी शैंपेन फैंक कर उनमें "एल्केलाइन पाइरोगैलोल" भरा और अपने बैग में डाल कर सचिन सर के घर आ गया। पार्टी के बाद जब सर मेहमानों को छोड़ने गेट तक गए तो मैंने बोतलों का द्रव पॉट में डालकर, बोतलों को वहीं छोड़ दिया और शैंपेन की बोतलें अपने बैग में डाल लीं।

"और पॉट में जो तुमने 'एल्केलाइन पाइरोगैलोल' डाला उसने कमरे की सारी ऑक्सीजन अवशोषित कर ली और दम घुटने से सचिन की मृत्यु हो गई। तुम्हें पता था कि सचिन हॉल में सोते हैं?"

"जी सर, शोध के सिलसिले में, मैं नियमित सचिन सर के घर जाता रहा हूँ। मुझे पता था कि मैडम की अनुपस्थिति में सर हॉल में ही सोते थे क्योंकि उनकी स्टडी वहीं थी।"

"तुम सचमुच जहीन हो शैलेश जो तुमने ऐसी योजना बनाई पर पुलिस तुमसे भी ज्यादा स्मार्ट है। अपराधी बच नहीं सकता। अखिल को फँसाने के प्रयास में तुम स्वयं ही फँस गए।"

"तुम युवा और होनहार वैज्ञानिक हो, पर तुम्हारे इस अपराध की सजा तो तुम्हें भुगतनी ही पड़ेगी।"

शैलेश को डॉ. सचिन की हत्या के आरोप में गिरफ्तार कर लिया गया।

pragyamaitrey@gmail.com

शुगर टेक्नॉलॉजी

संजय गोस्वामी

संजय गोस्वामी विगत पंद्रह वर्षों से विज्ञान लेखन से जुड़े हैं आपने हिन्दी विज्ञान के क्षेत्र में तीन सौ से अधिक कॅरियर लेख लिखे हैं जो विज्ञान विषयक होते हैं। 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिये' में वे विगत लगभग पांच वर्षों से शृंखलाबद्ध लिख रहे हैं। इसके अतिरिक्त विज्ञान लेख, विज्ञान समाचार, विज्ञान कविता, विज्ञान रपट, विज्ञान समीक्षा आदि का लेखन और प्रकाशन हुआ है। कई पुरस्कारों से सम्मानित संजय गोस्वामी हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद्, भा.प.अ. केन्द्र, मुंबई के कार्यकारी सदस्य हैं। आप इन दिनों मुंबई में रहकर हिन्दी विज्ञान पत्रिका में लेखन एवं संपादन से संबद्ध हैं।

चीनी मुख्यतः गन्ना (या ईख) एवं चुकन्दर से तैयार की जाती है। विशेषकर भोजन में मिठास की, तो हमारा ध्यान बरबस गन्ने की ओर जाता है। उससे हम अनेक रूपों में मिठास प्रदान करने वाले पदार्थ प्राप्त करते हैं, जैसे चीनी -गुड़, राब, शक्कर, खांड, बूरा, मिश्री, आदि। यह फलों, मधु एवं अन्य कई स्रोतों में भी पायी जाती है। इसे मारवाडी भाषा में 'खोड' अथवा 'मुरस' कहा जाता है। शुगर टेक्नॉलॉजी रासायनिक इंजीनियरिंग की एक शाखा है जिसमें गन्ने से चीनी बनाने के बारे में बताया जाता है शुगर टेक्नॉलॉजी में बैचलर डिग्री कर अच्छा कॅरियर बना सकते हैं शुगर टेक्नॉलॉजी में बैचलर से लेकर पीएच-डी तक पाठ्यक्रम है शुगर टेक्नॉलॉजी इंजीनियरिंग की एक विशेष शाखा है जो गन्ने से चीनी के उत्पादन, शोधन और पैकेजिंग से संबंधित है। यह शुगर, शर्करा या चीनी एक क्रिस्टलीय खाद्य पदार्थ है। इसमें मुख्यतः सुक्रोज, लैक्टोज एवं फ्रक्टोज उपस्थित होता है। चीनी को प्राप्त करने का सबसे प्रमुख स्रोत गन्ना ही है। कहते हैं, विश्व में जितने क्षेत्र में गन्ने की खेती की जाती है, उसका लगभग आधा हमारे देश में है। कोई आश्चर्य नहीं कि गन्ने की फसल हमारे देश की सबसे महत्वपूर्ण व्यावसायिक फसलों में से एक है शुगर (चीनी) उद्योग हमारे देश के प्रमुख उद्योगों में है। हालांकि इस उद्योग को बहुत पुराना नहीं कहा जा सकता दूसरे महायुद्ध के दौरान शुगर (चीनी) उद्योग का तेजी से विकास हुआ है। मानव की स्वाद ग्रन्थियाँ मस्तिष्क को इसका स्वाद मीठा बताती हैं। चीनी मुख्यतः गन्ना (या ईख) एवं चुकन्दर से तैयार की जाती है। प्राथमिक चीनी, ग्लूकोज, प्रकाश संश्लेषण का एक उत्पाद है और सभी हरे पौधों में होता है। अधिकांश पौधों में, शर्करा एक मिश्रण के रूप में होते हैं जो आसानी से घटकों में विभाजित नहीं हो सकते हैं। कुछ पौधों के रस में, शर्करा के मिश्रण को सिरप में मिलाया जाता है। गन्ना के रस (सैकुरम ऑफिसारम) और चीनी चुकंदर (बीटा वल्गरिस) शुद्ध सुक्रोज हैं, हालांकि चुकंदर चीनी आम तौर पर गन्ना शुगर से बहुत कम मीठा है ये दो चीनी फसलें वाणिज्यिक सूक्रोज के मुख्य स्रोत हैं गन्ना और चीनी बीटों में चीनी सबसे बड़ी मात्रा में होता है, जहां से चीनी को आर्थिक और व्यावसायिक रूप से अलग किया जाता है। इसमें मुख्यतः सुक्रोज उपस्थित होता है। जिसका रासायनिक सूत्र -. $C_{12}H_{22}O_{11}$,आणविक भार. 342g/mol ,घनत्व = 1.58 kg / m^3 होता है। सुक्रोज पानी में घुलनशील है लेकिन मिथाइल अल्कोहल और एथिल अल्कोहल में थोड़ा घुलनशील है।

डिमांड

समय के साथ स्टूडेंट्स के सामने कॅरियर के ढेरों नए विकल्प खुल गए हैं, लेकिन आज भी इंजीनियरिंग फील्ड स्टूडेंट्स के लिए पसंदीदा कॅरियर विकल्प बना हुआ है। इंजीनियरिंग से जुड़ी एक फील्ड है शुगर इंजीनियरिंग की, जिसमें कॅरियर विकल्प की कमी नहीं है। जैसे-जैसे इसका दायरा बढ़ रहा है, इस फील्ड में प्रोफेशनल्स की डिमांड भी बढ़ती जा रही है।

काम

शुगर इंजीनियर का मुख्य काम के गन्ने से चीनी तक बनाने हेतु निर्माण में आने वाली समस्याओं को सॉल्व करना है। इस फील्ड से जुड़े प्रोफेशनल्स चीनी उद्योग, शराब उद्योग, खाद्य व कृषि उत्पादों की प्रोसेसिंग, फर्टिलाइजर टेक्नॉलॉजी, फार्मेसी और एनवॉयर्नमेंटल इंजीनियरिंग जैसे अन्य क्षेत्रों में काम करते हैं। अपनी फील्ड में एक्सपर्ट होने के लिए आपको फिजिक्स, केमिस्ट्री, मैथ्स, मैकेनिकल और इंजीनियरिंग आदि की पढ़ाई भी करनी होती है। कुछ शुगर इंजीनियर, किण्वन, ऑक्सीडेशन, पॉलीमराइजेशन या प्रदूषण नियंत्रण जैसी फील्ड में भी एक्सपर्ट्स हो जाते हैं।

महत्वपूर्ण उद्योग : चीनी उद्योग कृषि आधारित महत्वपूर्ण और सबसे बड़ा उद्योग है। जो लगभग 50 मिलियन गन्ना किसानों और चीनी मिलों में सीधे नियोजित 5 लाख कर्मियों की ग्रामीण आजीविका को प्रभावित करती है। जिसमें हजारों इंजीनियर काम कर रहे हैं। चीनी उद्योग में लगभग चार करोड़ गन्ना किसान, उनके आश्रित तथा काफी अधिक संख्या में खेतिहर मजदूर गन्ने की खेती, कटाई एवं संबंधित गतिविधियों में लगे हैं, जोकि ग्रामीण जनसंख्या के 7.5% हैं। इसके अतिरिक्त, लगभग चार लाख कुशल कामगार, जो अधिकांशतः ग्रामीण क्षेत्रों से हैं, चीनी उद्योग में लगे हैं। भारत में चीनी उद्योग ग्रामीण संसाधनों को जुटाकर रोजगार एवं उच्चतर आय, परिवहन एवं संचार सुविधाओं के सृजन द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए केन्द्रीय बिंदु रहा है। इसके अतिरिक्त कई चीनी फैक्ट्रियों ने ग्रामीण आबादी के लाभ के लिए स्कूल, कॉलेज, चिकित्सा केन्द्र तथा अस्पताल स्थापित किए हैं। कुछ चीनी फैक्ट्रियों ने सह-उत्पादन पर आधारित उद्योग भी लगाए हैं तथा शराब के कारखाने, कार्बनिक रसायन प्लांट, पेपर एवं बोर्ड फैक्ट्री तथा सह उत्पादन प्लांट भी स्थापित किए हैं। यह उद्योग पुनः आपूर्तियोग्य बायोमास का सृजन करता है तथा फोसिल ईंधन पर निर्भर किए बिना इसका उपयोग करता है। अतः भारतीय अर्थव्यवस्था में चीनी उद्योग का बहुत बड़ा योगदान है।

शुगर इंजीनियरिंग लगातार नवीनतम नवाचारों और प्रौद्योगिकियों के साथ युवा इंजीनियर के लिए बहुत ही आकर्षण कॅरियर हैं चीनी का प्रकार -चीनी उत्पादों को मोटे तौर पर चार मूल श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता हैः दानेदार, भूरे, तरल चीनी और उलटा शक्कर। सभी के बीच सबसे ज्यादा लोकप्रिय दानेदार चीनी है, जो शुद्ध क्रिस्टलीय सूक्रोज, घरेलू उपयोग, खाद्य प्रसंस्करण उद्योग और पेशेवर बेकरों के लिए उपयोग किया जाता है। इसे आगे क्रिस्टल आकार के आधार पर कई प्रकार की चीनी में वर्गीकृत किया जा सकता है।

गन्ना से चीनी उत्पादन प्रक्रियाः गन्ने से चीनी तक बनाने हेतु आपको इस फील्ड में गन्ना के बल्क को केन चाकू से हाथ से या कटर से काट लिया जाता है तब कटे हुये गन्ना को वाहनों में लोड किया जाता है कटाई वाले गन्ने के डंठल और बीट को यांत्रिक रूप से ट्रक या रेल कारों में लोड किया जाता है और कच्ची चीनी में प्रसंस्करण के लिए मिलों को ले जाया जाता है और चक्की में ले जाया जाता है। प्रायः गन्ने के डंठलों को कुचल कर उनका रस निकाला जाता है। पहले दबाव से गन्ना रस निष्कर्षण, गन्ना जूस निकालना रस की शुद्धिकरण के लिए, गर्म पानी में गन्ना का रस और कन्वेयर पर फैलाकर गन्ना पानी के मजबूत जेट्स के माध्यम से गुजरता है गन्ना के रस के अच्छे स्पष्टीकरण के बिना, अच्छी गुणवत्ता वाली कच्ची चीनी का उत्पादन असंभव है गन्ना का रस स्पष्टीकरण के लिए रस हीटर से बाष्पीकरण, का उपयोग विलेय पदार्थों के प्रथक्करण में किया जाता है। बाद में क्लैरिफायर, क्रिस्टलीकरण, अपकेंद्रित्र द्वारा चीनी का संचय किया जाता है जैसे शुद्ध होने के बाद, साफ जूस, अधिकांश पानी को हटाने के लिए वैक्यूम वाष्पीकरण से गुजरता है। जूस स्पष्टीकरण और निस्पंदन, चीनी निर्माण प्रक्रिया में महत्वपूर्ण हैं और उनकी क्षमता को अधिकतम किया जाना चाहिए ताकि किसी भी बाद की प्रक्रियाओं को प्रभावित कर सकता है। वाष्पीकरण के दौरान शुद्ध गन्ने का रस बाष्पीकरण करने वाले पात्र में उबला जाता है जो मोटे सिरप को छोड़कर, अधिकांश पानी को अलग करता है। चीनी सिरप को संतृप्त, ठंडा किया जाता है, सफेद शर्करा को स्लरी मशीन में रखकर और तरल मिश्रण सत्तर प्रतिशत मिथाइलेट और तीस प्रतिशत ग्लिसरीन के 3.3 भागों के साथ मिलाकर शुद्ध चीनी बनाया जाता है और शुद्ध चीनी को पानी से धोया जाता है और सूख जाता है चीनी क्रिस्टल बनाने के लिए चीनी के निर्माण में अगला कदम क्रिस्टलीकरण है। क्रिस्टलीकरण एक एकल

चरण वैक्यूम पैन में होता है चीनी के साथ संतृप्त होने तक शेष तरल को सुखाया जाता है चीनी को सेंटीफ्यूगिलिंग और कन्वेयर का उपयोग कर सूखा लिया जाता है क्रिस्टलीकरण के बाद शुद्ध चीनी पैक किया जाता है। क्रिस्टलीकरण प्रक्रिया में दो प्रमुख घटना होता है न्यूक्लियेशन और क्रिस्टल विकास। चीनी उद्योग में क्रिस्टिसेशन वाष्पीकरण के बाद की प्रक्रिया है। चीनी का क्रिस्टलीकरण में अवस्था परिवर्तन होता है और तरल ठंडा होने के बाद रवे का रुप में आ जाती है बाद में इसे एक अपकेंद्रित्र मशीन में डाल दिया जाता है अपकेंद्रित्र मशीन दो सौ आरपीएम पर पंद्रह घंटे के लिए चलता है केन्द्रापसारक बल द्वारा कच्ची चीनी से गुड़ या मोटी सिरप (अपशिष्ट),अलग किया जाता है। इस प्रक्रिया में हमेशा हमें ध्यान देना चाहिये कि गन्ने को औसत तापमान चौबीस डिग्री सेल्सियस है इसके लिए विभिन्न प्रक्रिया उपकरणों का अध्ययन जैसे चीनी संघनित्र ट्रे वाइपोएटर, वाष्पीकरणकर्ता टैंक, रस और सीरूओ सल्लिटीकरण टैंक ,मड मिक्सर, रूथ स्टीम संचयकर्ता टैंक, चीनी मेलटर, रस हीटर, रिफाइनरी कार्बोनेटेटर, तरल तरल हीटर, रस फ्लैश टैंक, गुड़, रस, सिरप या बॉयलर फीड वॉटर के लिए वर्टिकल स्टोरेज टैंक, पेंच कन्वेयर, क्रिस्टलीसिअर, निरंतर वैक्यूम पैन आदि महत्वपूर्ण है। इसके अलावा पीएच नियंत्रण अन्य सिरप और रिफाइनरी शराब के लिए प्लवनशीलता का ज्ञान भी महत्वपूर्ण है। क्रिस्टलीकृत चीनी का दानेदार प्रकृति कई कारकों द्वारा निर्धारित किया जाता है, जिसमें शामिल हैं:

● सुपर संतृप्ति की डिग्री ● ठंडा करने की दर ● ठंडा करने की डिग्री ● समय
● कठोरता और सरगर्मी की लंबाई ● तापमान ● सीडिंग ● शर्करा का मिश्रण
● पीएच ● क्रिस्टल ग्रोथ

गन्ने से रस की निकासी के बाद केवल एक शुष्क मुलायम रेशेदार पदार्थ अवशेष रहता है। इसी अवशेष (अपशिष्ट) को खोई कहते है। इस खोई को पर्यावरण अनुकूल लकडी के विकल्प के रूप में प्रयोग किया जाता है। गन्ना से चीनी बनाने के क्रम में जो अपशिष्ट बचता है इन अपशिष्ट उत्पादों की आवश्यकता कागज और लकड़ी बनाने में फ्लाई ऐश तथा जैव ईंधन के रूप में अपशिष्ट का उपयोग कल कारखाना में होता है अपशिष्ट उत्पादों में गुड़, खमीर और मवेशियों के भोजन के लिए चारा के रूप में उपयोग किया जाता है। जैव सामग्री का विकास एवं अनुप्रयोग में शुष्क मुलायम रेशेदार पदार्थ का उपयोग किया जाता है। गुड़ में सूक्रोज की एक महत्वपूर्ण मात्रा होती है और इसकी अधिकतम निकासी हमेशा चीनी प्रौद्योगिकीविदों के लिए प्राथमिकता रही है। इसके लिए कुछ चीनी फैक्ट्रियों ने सह-उत्पादन पर आधारित उद्योग भी लगाए हैं तथा शराब के कारखाने, कार्बनिक रसायन प्लांट, पेपर एवं बोर्ड फैक्ट्री तथा सह उत्पादन प्लांट स्थापित किए हैं। भारत का चीनी उद्योग देश में सबसे अधिक नियंत्रित खाद्य प्रसंस्करण उद्योग में से एक है, शुगर इंजीनियर न केवल गन्ने से चीनी उत्पादन के लिये जिम्मेदार होता है बल्कि चीनी मिलों की गुणवत्ता और सुरक्षा के लिए, चीनी कारखाने के उपकरणों के कम्प्यूटेशनल तरल पदार्थ डायनामिक विश्लेषण,चीनी कारखाने के उपकरण का परिमित तत्व तनाव विश्लेषण,चीनी कारखाने के उपकरण का थर्मल विश्लेषण के लिए जिम्मेदार होता है। इसके अलावा एक कुशल शुगर इंजीनियर के लिये चीनी प्रक्रिया मैन्युफैक्चरिंग गन्ने की रोपण और कटाई,परियोजना प्रबंधन,चीनी मिल सेटिंग्स गणना,कूलिंग टॉवर विनिर्देश और विश्लेषण, सॉफ्टवेयर का उपयोग कर पाइप तनाव विश्लेषण, कारखानों को अपने सहजननीय क्षमता के लिए ऊर्जा अध्ययन और कारखाने के ऊर्जा संतुलन में सुधार के तरीकों का विश्लेषण करना होता है। प्रस्तावित चीनी कारखाने परियोजनाओं की पूंजीगत लागत अनुमान, इथेनॉल और डिस्टिलरी भाप की खपत, टर्बाइन का भी अध्ययन करना होता है, शुगर इंजीनियर के लिये कृषि आदानों की आपूर्ति से संबंधित परिवहन, मशीनरी

लक्ष्य

नई प्रौद्योगिकियों के विकास और कार्यान्वयन के माध्यम से गन्ना उद्योग की दक्षता में सुधार लाने और तकनीकी समस्याओं को सुलझाने में उद्योग की सहायता करना। शुगर टेक्नॉलॉजी का कोर्स करने के बाद सबसे ज्यादा नियुक्तियां चीनी मिल जैसे शुगर प्रोसेसिंग, बन्नारी अम्मन समूह, द्वारिकेश शूगर्स, राजश्री शुगर्स, राणा शुगर्स, मैन्युफैक्चरिंग, फूड इंडस्ट्री प्रिंटिंग में होती हैं। इसके अलावा, प्रोफेशनल्स मिनरल इंडस्ट्री, केमिकल प्लांट्स, फार्मास्यूटिकल, सिंथेटिक फाइबर्स, डाई, पेंट, वार्निश, औषधि निर्माण, टेक्सटाइल, फ्लाई ऐश उद्योग, प्लास्टिक उद्योग आदि क्षेत्रों में जॉब पा सकते हैं। शोध में रुचि रखने वाले रिसर्च इंजीनियरिंग का विभाग संभालते हैं। शुगर मिलों की नई बेहतर तकनीकियों को हरियाणा की शुगर मिल में लगाया जाए रिसर्च इंजीनियरिंग का काम है।

मुख्य विषय

शुगर प्रौद्योगिकी पाठ्यक्रम में विभिन्न कच्चे पदार्थ और फसलों के बारे में सामान्य विचार, उनके कार्य और उत्पादन इत्यादि। पाठ्यक्रम में कार्बनिक रसायन , कृषि रसायनए विद्युत यंत्र, इंसट्रूमेन्टेशन, ऊर्जा संरक्षण आदि विषय हैं इंसट्रूमेन्टेशन प्रक्रिया व नियंत्रण मैसकिट, ब-मैसकिट, और सी-मैसकिट का निर्माण अथवा आर-१, आर-२, और आर-३ इत्यादि मैसकिट-स्लरी निर्माण की विधि फाल्स ग्रेन और कांगलोमिरेट्स आदि हैं। निर्वात पैन कंट्रोल और उनके अभिकल्पों में उपयोग किए जाने वाले विभिन्न उपकरण गुणवत्ता नियंत्रण और रखरखाव आदि हैं।

उद्देश्य

इंजीनियर, प्रयोगशाला केमिस्ट, पर्यवेक्षक, पैन-मैन, बायलर आदि से संबंधित गन्ना-चीनी उत्पादन प्रक्रियाओं के उन्नत तरीकों के लिए स्नातकों को प्रशिक्षण देना है। चीनी बनाने के लिए विभिन्न कच्चे पदार्थ और फसलों के बारे में सामान्य जानकारी देना, उनके कार्य और उत्पादन इत्यादि के बारे में जानकारी देना । छोटे पैमाने पर चीनी आधारित उद्योगों को शुरू करने के लिए इंजीनियर/कर्मियों को प्रशिक्षण देना एसीटोन, एसिटिक एसिड, शराब, ऑक्लेलिक एसिड आदि जैसे संबद्ध चीनी आधारित उत्पादों के उत्पादन के लिए कर्मियों को प्रशिक्षण देना। किण्वन को एनारोबिक माना जाता है, किण्वन एक चयापचय प्रक्रिया है जो चीनी (मुख्य रूप से ग्लूकोज, फ्रुक्टोस और सुक्रोज) को एसिड, गैस या अल्कोहल में परिवर्तित करती है। किण्वन ऑक्सीजन का उपयोग नहीं करता है।

की व्यापार सेवाओं और विभिन्न सहायक गतिविधियों में भी रोजगार के अवसर हैं। भारत ब्राजील के बाद विश्व में चीनी का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक और सबसे बड़ा उपभोक्ता भी है। आज भारतीय चीनी उद्योगों का वार्षिक उत्पादन अनुमानतः 80000 करोड़ रूपए है।

1951 में भारत सरकार ने चीनी उद्योगों का औद्योगिक विकास योजना बनाई और चीनी के उत्पादन और खपत के लिए कई लक्ष्यों को निर्धारित किया है। आज देश में 558 संस्थापित चीनी मिलें हैं जिनकी 190 लाख मीट्रिक टन चीनी की उत्पादन क्षमता है। ये मिलें देश के 18 राज्यों में अवस्थित हैं। इनमें से लगभग 62% मिलें सहकारी क्षेत्र में हैं, 38% निजी क्षेत्र में तथा शेष सार्वजनिक क्षेत्र में हैं। भारत में चीनी उद्योग ग्रामीण संसाधनों को जुटाकर रोजगार एवं उच्चतर आय, परिवहन एवं संचार सुविधाओं के सृजन द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक-आर्थिक विकास रहा है। इसके अतिरिक्त कई चीनी फैक्ट्रियों ने ग्रामीण आबादी के लाभ के लिए स्कूल, कॉलेज, चिकित्सा केन्द्र तथा अस्पताल स्थापित किए हैं। कुछ चीनी फैक्ट्रियों ने सह-उत्पादन पर आधारित उद्योग भी लगाए हैं तथा शराब के कारखाने, कार्बनिक रसायन प्लांट, पेपर एवं बोर्ड फैक्ट्री तथा सह उत्पादन प्लांट स्थापित किए हैं। यह उद्योग पुनः आपूर्तियोग्य बायोमास का सृजन करता है तथा फोसिल ईंधन पर निर्भर किए बिना इसका उपयोग करता है। अतः भारतीय अर्थव्यवस्था में चीनी उद्योग का बहुत बड़ा योगदान है। भारत में चीनी निर्माण में उत्तर प्रदेश 145.39 मिलियन टन का उत्पादन कर पहले स्थान पर है उसके बाद महाराष्ट्र 82.870 मिलियन टन का उत्पादन कर दुसरे स्थान पर तथा कर्नाटक 41.9 मिलियन टन का उत्पादन कर तृतीय स्थान पर है। भारत के अन्य राज्य तमिलनाडू, बिहार, गुजरात, आंध्रप्रदेश, तेलंगाना, हरियाणा, पंजाब, उत्तराखंड भी चीनी का उत्पादन करते हैं।

कोर्स

- बीटेक- शुगर प्रौद्योगिकी
- औद्योगिक यंत्रीकरण एवं प्रक्रम स्वचालन में प्रमाण-पत्र पाठ्यक्रम
- बीएससी शुगर प्रौद्योगिकी/शुगर इंजीनियरिंग
- शुगर इंजीनियरिंग में सर्टिफिकेट कोर्स
- शुगर निर्माण में सर्टिफिकेट कोर्स
- गन्ना उत्पादकता एवं परिपक्वता प्रबन्धन में प्रमाण-पत्र पाठ्यक्रम
- औद्योगिक किर्मेंटेशन और अल्कोहल टेक्नॉलॉजी में स्नातकोत्तर डिप्लोमा
- शुगर इंजीनियरिंग में पोस्ट ग्रेजुएट डिप्लोमा
- शुगर इंस्ट्रुमेंटेशन टेक्नॉलॉजी में पोस्ट ग्रेजुएट डिप्लोमा
- शुगर टेक्नॉलॉजी में पोस्ट ग्रेजुएट डिप्लोमा
- बीटेक- शुगर और किर्मेंटेशन प्रौद्योगिकी
- एमएससी- शुगर प्रौद्योगिकी
- एमएसीसी-किर्मेंटेशन

संभावनाएं

बीटेक- शुगर प्रौद्योगिकी पाठ्यक्रम को पूरा करने के बाद, छात्रों को चीनी और ऊर्जा संयंत्र में चीनी/ईटीपी/सह-प्रयोगशाला में इंजीनियर, प्रबंधक, प्रोसेस मैनेजर के रूप में काम करने का अवसर मिलता है। एमएसीसी-किर्मेंटेशन को पूरा करने के बाद किण्वन उद्योगों विश्लेषणात्मक रसायनज्ञ के रूप में काम करने का अवसर मिलता है। इस फ्रेश ग्रेजुएटस को साइंटिस्ट के रूप में लेकर शुगर इंजीनियर को चीनी उद्योग एवं चीनी उद्योग से संबंधित सरकारी विभागों भारत सरकार उपभोक्ता मामले खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण मंत्रालय

भारत सरकार उपभोक्ता मामले, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, गुजरात, तमिलनाडु और कर्नाटक राज्यों में सहकारी चीनी उद्योग/शर्करा इकाइयां/आसवनी में इंजीनियर, प्रयोगशाला केमिस्ट, पर्यवेक्षक, संचालक, रसायनज्ञ, डाइरेक्टर, प्रबंधक इत्यादि पदों पर नियुक्त किया जाता है। इसके अलावा अन्य आसवनी, बियर, एव इथेनॉल में कारखानों प्रबंधक, पर्यवेक्षक रसायनज्ञ इत्यादि के पदों पर नियुक्त किया जाता है। बीएससी शुगर इंजीनियर करने के बाद सबसे अधिक नौकरी की संभावना भारत की सबसे बड़ी चीनी उद्योग और इथेनॉल निर्माता कंपनी, बजाज हिंदुस्तान लिमिटेड में हैं। इसके अलावा आप एसआईईएल ग्रुप, डीएससीएल समूह, बिड़ला समूह, मैकडोवेल में इंजीनियर/प्रबंधक, पर्यवेक्षक इत्यादि के पदों पर काम कर सकते हैं। 1936 में स्थापित राष्ट्रीय शुगर संस्थान (एनएसआई), कानपुर शुगर इंजीनियरिंग में प्रशिक्षण अनुसंधान में सर्वश्रेष्ठ कॉलेज है नेशनल शुगर इंस्टीट्यूट, कानपुर से शुगर इंजीनियरिंग में कोर्स करने के बाद, बलरामपुर चीनी मिल्स लिमिटेड, कोलकाता, पश्चिम बंगाल, बन्नारी अम्मन शुगर्स लिमिटेड, कोयंबटूर, तमिलनाडु, आंध्र शुगर्स, पश्चिम गोदावरी जिला, आंध्र प्रदेश, धंपुर शुगर मिल्स, लि., बिजनौर, उत्तरप्रदेश द्वारिकेश शुगर इंडस्ट्रीज लिमिटेड में इंजीनियर/प्रबंधक के पद पर काम करने का अवसर मिलता है। विदेशी कंपनियों में नेशनल शुगर वर्क्स (युगांडा) गुयाना शुगर कॉर्पोरेशन, पेलवाटे शुगर इंडस्ट्रीज (श्रीलंका), किनारा शुगर कं. (युगांडा), शुगर कंपनी (नेपाल) सूडानी चीनी कंपनी लिमिटेड (सूडान), शुगर मुमियां शुगर कं.(केन्या), तेंडहो शुगर्स (इथियोपिया), ईआईडी पेरी थिरू अरोहर नागार्जुन इंटरनेशनल (वियतनाम) कामधेनू शुगर (कंबोडिया) आदि शुगर मिल्स में इंजीनियर/प्रबंधक के पद पर काम करने का अवसर मिलता है ।

सैलरी पैकेज

शुगर इंजीनियरिंग की फील्ड में सैलरी प्रोफेशनल के एक्सपीरियंस, क्वालिफिकेशन आदि पर निर्भर करती है। प्राइवेट सेक्टर में प्रोफेशनल्स को ज्यादा पैसा ऑफर किया जाता है। बतौर फ्रेशर्स करियर शुः करने पर सैलरी चालीस से लेकर पचास हजार रुपये प्रतिमाह हो सकती है।

मुख्य संस्थान

- राष्ट्रीय शुगर संस्थान (एनएसआई), कानपुर
- गुरु नानक देव विश्वविद्यालयः खाद्य विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, अमृतसर
- एसबीआई, कोयम्बटूर (कोयम्बटूर जिला) - 641007
- आईसीएआर - गन्ना ब्रीडिंग इंस्टीट्यूट, कोइंबेटो
- वसंतदादा शुगर इंस्टीट्यूट अनुसंधान संस्थान,पुणे, महाराष्ट्र
- राजारामबापू कॉलेज ऑफ शुगर टेक्नॉलॉजी, उरुण इस्लामपुर, महाराष्ट्र
- ईवांगा आर्ट्स कॉलेज (स्वायत्त),तिरुवुली रोड, अरुपुकुट्टई
- सरकारी पॉलिटेक्निक, विश्वविद्यालय रोड, विद्यानगर,कोल्हापुर, महाराष्ट्र
- अण्णा विश्वविद्यालय,चेन्नई, तमिलनाडु
- बनारस हिंदू विश्वविद्यालय (बीएचयू), वाराणसी
- पेट्रोलियम एंड एनर्जी स्टडीज विश्वविद्यालय, देहरादून
- भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, मुंबई

अवधि

बीटेक- शुगर प्रौद्योगिकी कोर्स की अवधि चार साल का है। जबकि एम. एससी-शुगर प्रौद्योगिकी की अवधि दो साल का है। सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम छः महीने से एक साल तक है जिसके लिए बीटेक-शुगर प्रौद्योगिकीध मैकेनिकल/केमिकल/इलेक्ट्रिकल या फार्मेसी में डिग्री होना आवश्यक है।

पात्रता

बीएससी शुगर प्रौद्योगिकी (साढ़े तीन वर्षीय पाठ्यक्रम)/एम.एससी(एकीकृत पाठ्यक्रम) कोर्स में आमतौर पर बारहवीं की मेरिट के आधार पर दाखिला दिया जाता है। साइंस के छात्र के लिए बारहवीं में भौतिकी, गणित, और रसायनशास्त्र पढ़ा होना जरूरी है तभी उसे दाखिला दिया जाता है। शुगर प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए मैकेनिकल, केमिकल, इंस्ट्रुमेंटेशन, इलेक्ट्रिकल या कम्प्यूटर इंजीनियरिंग का अध्ययन करने की आवश्यकता होती है। बीटेक-शुगर प्रौद्योगिकी प्रवेश के लिए पात्रता, बारहवीं पास (विज्ञान) या फार्मेसी में डिप्लोमा होना चाहिये।

goswamisanjay80@yahoo.in

एक चिकित्सक की याद में

1 जुलाई को भारत में राष्ट्रीय चिकित्सक दिवस (National Doctors' Day) मनाया जाता है। डॉ.बिधान चन्द्र रॉय (डॉ. बी.सी.रॉय) पश्चिम बंगाल के दूसरे मुख्यमंत्री और प्रसिद्ध चिकित्सक को सम्मान देने के लिये उनकी जयंती और पुण्यतिथि पर यह दिवस पूरे भारत भर में हर वर्ष राष्ट्रीय चिकित्सक दिवस को मनाया जाता है। वर्ष 1991 में भारत सरकार ने चिकित्सक दिवस मनाने शुरूआत की थी। डॉ. बी.सी.रॉय का जन्म 1 जुलाई 1882 को बिहार के पटना में हुआ था। डॉ. रॉय ने अपनी डॉक्टरी की डिग्री कलकत्ता से पूरी की और वर्ष 1911 में इसके बाद अपनी एमआरसीपी और एफआरसीएस की डिग्री लंदन से पूरी की और उसी वर्ष से भारत में एक चिकित्सक के रुप में अपने चिकित्सा जीवन की शुरुआत की। बाद में उन्होंने कलकत्ता मेडिकल कॉलेज से एक शिक्षक के रुप में जुड़ गये, तत्पश्चात वह कैंपबेल मेडिकल स्कूल और उसके बाद कारमाईकल मेडिकल कॉलेज से जुड़ गये। वह एक प्रसिद्ध चिकित्सक थे और नामी शिक्षाविद् होने के साथ ही एक स्वतंत्रता सेनानी के रूप में सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान महात्मा गाँधी से जुड़े। बाद में वह भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के नेता बने और उसके बाद पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री भी बने। 4 फरवरी, 1961 में उन्हें भारत के सर्वोच्च नागरिक सम्मान भारत रत्न से नवाज़ा गया। इस दुनिया में अपनी महान सेवा देने के बाद 80 वर्ष की आयु में वर्ष 1962 में अपने जन्मदिवस के दिन ही उनकी मृत्यु हो गयी। उनको सम्मान और श्रद्धंजलि देने के लिये उनके नाम पर डॉ.बी.सी. रॉय राष्ट्रीय पुरस्कार की शुरुआत हुई।

भारत में राष्ट्रीय चिकित्सक दिवस एक बड़ा जागरुकता अभियान है जो सभी को मौका देता है चिकित्सकों की भूमिका, महत्व और जिम्मेदारी के बारे में जानकारी प्राप्त करने के साथ ही साथ चिकित्सीय पेशेवर को इसके नजदीक आने और अपने पेशे की जिम्मेदारी को समर्पण के साथ निभाने के लिये प्रोत्साहित करता है। देश के अलग-अलग हिस्सों के चिकित्सालयों और क्लीनिकों में इस दिवस पर लोग अपने चिकित्सकों को श्रद्धांजलि देते है और उनकी कड़ी मेहनत, प्रतिबद्धता से एक बेहतर और स्वस्थ समाज विकसित करने के प्रयासों के लिए उन्हें याद करते हैं।

उड़नतश्तरी का रोमांच

2 जुलाई को विश्व उड़नतश्तरी दिवस (World UFO Day) मनाया जाता है। आकाश में उड़ने वाली अज्ञात वस्तुओं जिन्हें उड़नतश्तरी यानी यूएफओ कहा जाता है, आज भी हमारे लिए अबूझ पहेली बनी हुई हैं। माना जाता है कि यूएफओ वास्तव में दूसरे ग्रह से आने वाले अंतरिक्ष यान हैं, जिनके माध्यम से दूसरे ग्रह के प्राणी अथवा रोबो धरती पर या धरती के आसपास आते हैं। यूएफओ से संबंधित घटनाओं से दुनिया के लोगों को रूबरू कराने के उद्देश्य से इस दिवस का आयोजन किया जाता है। इतिहास पर नज़र डालें तो प्राचीन समय से मनुष्य उड़नतश्तरियों को देखने के दावे पेश करता आ रहा है।

इरफान ह्यूमन

डॉ. इरफान ह्यूमन विगत पच्चीस वर्षों से 'साइंस न्यूज एण्ड व्यूज़' मासिक विज्ञान पत्रिका का संपादन व प्रकाशन कर रहे हैं। आप विज्ञान लोकप्रियकरण कार्यक्रमों के माध्यम से देशभर में वैज्ञानिक जागरुकता के लिए प्रयासरत हैं। आपके एक हजार से अधिक लेख प्रकाशित हुए हैं, आकाशवाणी से अनेक विज्ञानवार्ताओं का प्रसारण हुआ है, विज्ञान धारावाहिक लेखन तथा विज्ञान डाक्यूमेंट्री फिल्मों के निर्माण में आपका बड़ा योगदान है। मुंबई में साइंस फिल्म फेस्टिवल आपकी फिल्में प्रदर्शित हुई हैं। विज्ञान लेखन तथा विज्ञान लोकप्रियकरण के लिए आपको कई सम्मान प्राप्त हैं तथा कई वैज्ञानिक संस्थाओं के मानद हैं। वर्तमान में आप शाहजहाँपुर उ.प्र. में निवासरत हैं।

तंज़ानिया की प्राचीन गुफ़ा, जो लगभग 29,000 वर्ष पुरानी समझी जाती है, वहाँ की आश्चर्यजनक चित्रकारी एलियंस के पृथ्वी पर आगमन के प्रमाण प्रस्तुत करती है। इटोलो में स्थित अन्य चित्र में बहुत सी तश्तरी सदृश्य वस्तुओं को स्पष्ट देखा जा सकता है, जिन्हें आज हम उड़नतश्तरियाँ कहते हैं। कोलो स्थित एक अन्य चित्र में एक स्त्री के चारों ओर चार जीवधारियों को दर्शाया गया है। इसमें से एक आकृति किसी वर्गाकार वस्तु को बड़े ध्यान से देख रही है। इसी तरह लगभग दस हज़ार साल पहले इटली की वाल केमोनिका की गुफ़ा की चित्रकारी एलियंस के अस्तित्व को दर्शाती है। पत्थर पर बने दो जीवधारियों को एक सुरक्षित सूट में देखा जा सकता है, जो अपने हांथों में अजीब से औज़ार या यंत्र पकड़े हुए हैं। अन्य सभ्यतायें जो आश्चर्यजनक हवाई वस्तुओं की व्याख्या करती हैं, उनमें प्राचीन यूनान, मिस्र और रोम की सभ्यतायें भी शामिल हैं। यूनानी दर्शनिक अरस्तु ने आकाश में मंडराती चीज़ों के बारे में लिखा है कि जो आकाश से उतरतीं थीं और हवा में उड़ते हुए कहीं खो जाती थीं, जिनको अब हम यूएफ़ओ कहते हैं।

अमेरिका में आए दिन यूएफओ के देखे जाने की घटना सामने आती रहती हैं। रक्षा विभाग ने एक ऐसा वीडियो जारी किया है, जिसमें यूएफओ को देखा जा रहा है। वीडियो में नेवी एफ-18 फाइटर्स का अचानक यूएफओ से सामना होता है। F/A-18 Super Hornet military जेट ने अचानक हाईस्पीड में चल रही अज्ञात वस्तु को अपने कैमरे में कैद किया। यूएफओ की स्पीड इतनी अधिक थी कि उसे कैप्चर कर पाना भी इतना आसान नहीं था। हालांकि, इस वीडियो को जारी करने से पहले रक्षा विभाग ने इसकी तारीख और इसके लोकेशन को हटा दिया है। आए दिन भारत सहित दुनिया के कई देशों से यूएफओ को देखे जाने के समाचार सामने आते रहते हैं। उड़न तश्तरियों के अस्तित्व को आधिकारिक तौर पर दुनिया भर की अधिकांश सरकारों द्वारा मान्यता प्राप्त नहीं है, लेकिन कुछ गवाह उड़न तश्तरियों के देखे जाने का दावा करते हैं। इनके देखे जाने के बहुत से रिकॉर्ड दर्ज किए गए हैं। ऐसा माना जाता है की इन उड़ती वस्तुओं का संबंध परग्रही दुनिया से है क्योंकि इनके संचालन की असाधारण और प्रभावशाली क्षमता मनुष्यों द्वारा प्रयुक्त किसी भी उपकरण से बिल्कुल मेल नहीं खाती, चाहे वह सैन्य उपकरण हों या नागरिक वह बिल्कुल अलग दिखती है जैसा कि विज्ञान कथा फिल्मों में दिखाया जाता है कि इन अज्ञात उड़ती वस्तुओं का आकार किसी डिस्क या तश्तरी के समान होता है या ऐसा दिखाई देता है, जिस कारण इन्हें उड़न तश्तरियों का नाम मिला है। कई चश्मदीद गवाहों के अनुसार इन अज्ञात उड़ती वस्तुओं के बाहरी आवरण पर तेज प्रकाश होता है। ये उड़न तश्तरियाँ बहुत छोटे से लेकर बहुत विशाल आकार तक हो सकतीं हैं। उड़नतश्तरी शब्द वर्ष 1940 के दशक में निर्मित किया गया था और ऐसी वस्तुओं को दर्शाने या बताने के लिए प्रयुक्त किया गया था जिनके उस दशक में बहुतायत में देखे जानें के मामले प्रकाश में आए। तब से लेकर अब तक इन अज्ञात वस्तुओं के रंग-रूप में बहुत परिवर्तन आया है लेकिन उड़न तश्तरी शब्द अभी भी प्रयोग में है और ऐसी उड़ती वस्तुओं के लिए प्रयुक्त होता है जो दिखनें में किसी तश्तरी जैसी दिखाई देती हैं। वर्ष 2001 में यूएफओ शोधकर्ता हैक्टन एक्दोगन ने पहली बार यूएफओ दिवस का आयोजन किया था, तब से यह दिवस हर वर्ष नियमित रूप से मनाया जाता है। वर्ल्ड यूएफओ डे ऑर्गेनाइज़ेशन हर वर्ष कई देशों में इस दिवस को लेकर कई आयोजन करता है। यही नहीं आज कई संस्थायें इस दिवस को आयोजित कर यूएफओ पर रोमांचकारी जानकारियां उपलब्ध कराते हैं।

सुखी परिवार का मंत्र

11 जुलाई को विश्व जनसंख्या दिवस (World Population Day) मनाया जाता है। इसका आयोजन जनसंख्या संबंधित समस्याओं पर वैश्विक चेतना जागृत करने और जनसंख्या के मुद्दों के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए मनाया जाता है। ज्ञातव्य हो कि जनसंख्या का सीधा संबंध पर्यावरण और विकास के साथ जुड़ा हुआ हैं। वर्ष 1989 में संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम की संचालक परिषद ने 11 जुलाई को विश्व जनसंख्या दिवस के रूप में सिफारिश की थी। 11 जुलाई, 1987 में विश्व की पाँच अरब जनसंख्या ने इस वार्षिक संस्थापन आयोजन की अगुवाई की। पिछले कुछ वर्षों में विश्व की आबादी काफी बढ़ गई है, आज यह करीब 7.5 अरब तक पहुँच गयी है।

भारत चीन के बाद विश्व का दूसरा सबसे अधिक आबादी वाला देश है, जो कि विश्व की आबादी का लगभग पांचवां हिस्सा है तथा वर्ष 2022 तक इसके विश्व का सबसे अधिक आबादी वाला देश बनने का अनुमान है, इस तरह यह चीन की जनसँख्या को पार कर रहा है। जनसंख्या नियंत्रण का एक मात्र उपाय है परिवार नियोजन, जो लोगों को अपनी इच्छानुसार बच्चों के जन्म एवं गर्भधारण के अंतराल निर्धारण करने की सुविधा देता है। इसे गर्भनिरोधक विधियों और बांझपन के उपचार के उपयोग के माध्यम से प्राप्त किया जाता है। सुरक्षित एवं स्वैच्छिक परिवार नियोजन की पहुँच मानव अधिकार है। यह गरीबी को कम करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक है। यह लिंग समानता एवं महिला सशक्तिकरण को भी बढ़ावा देता है। सशक्त महिला परिवार एवं समुदाय के स्वास्थ्य और सृजनात्मकता में योगदान देती है तथा भावी

पीढ़ी के भविष्य को बेहतर बनाती हैं। फिर भी, विकासशील देशों में लगभग 225 मिलियन महिलाएं, जो कि गर्भावस्था से बचना चाहती है, वो सुरक्षित और प्रभावी परिवार नियोजन विधियों का उपयोग नहीं कर पाती है। परिवार नियोजन विषय के विद्वान और नसबंदी विशेषज्ञ डॉ. ललित मोहन पंत का मानना है कि अगर गर्भ निरोध के साधनों की जानकारी के बावजूद विवाहिताएं गर्भनिरोधक साधनों को नहीं अपना रही हैं, तो इसकी बड़ी वजह यह हो सकती है कि यह साधन उन तक पहुँच ही नहीं पा रहे हों। लिहाज़ा सरकार को चाहिए कि वह विवाहिताओं की इन साधनों तक आसान पहुँच सुनिश्चित करे। इसका कारण जानकारी एवं सेवाओं का अभाव तथा उनके भागीदारों या समाज द्वारा सहयोग में कमी हो सकती है। परिवार नियोजन सबसे किफायती-प्रभावी स्वास्थ्य उपायों में से एक है। परिवार नियोजन में निवेश से आर्थिक लाभ तथा अन्य लाभ मिलते हैं, जो कि राष्ट्रों को अपने विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायता करते हैं।

शांत मृत्यु का जनक

28 जुलाई को विश्व हेपेटाइटिस दिवस (World Hepatitis Day) मनाया जाता है। हेपाटाइटिस या यकृत शोथ यकृत (लिवर) को हानि पहुँचाने वाला एक गंभीर और ख़तरनाक रोग है। इसका शाब्दिक अर्थ ही यकृत को आघात पहुँचना है। यह नाम प्राचीन ग्रीक शब्द हेपार, मूल शब्द हेपैट जिसका अर्थ यकृत और प्रत्यय-आइटिस जिसका अर्थ सूजन है, से व्युत्पन्न है। इसके प्रमुख लक्षणों में अंगो के उत्तकों में सूजी हुई कोशिकाओं की उपस्थिति दर्शाता है, जो आगे चलकर पीलिया का रूप ले लेता है। यकृत यानी लिवर शरीर का एक महत्वपूर्ण अंग है। वह भोजन पचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। शरीर में जो भी रासायनिक क्रियाएं एवं परिवर्तन यानि उपापचय होते हैं, उनमें यकृत विशेष सहायता करता है। यदि यकृत सही ढंग से अपना काम नहीं करता या किसी कारण वह काम करना बंद कर देता है तो व्यक्ति को विभिन्न प्रकार के रोग हो सकते हैं। जब रोग अन्य लक्षणों के साथ-साथ यकृत से हानिकारक पदार्थों के निष्कासन, रक्त की संरचना के नियंत्रण और पाचन-सहायक पित्त के निर्माण में संलग्न यकृत के कार्यों में व्यवधान पहुँचाता है तो व्यक्ति बीमार हो जाता है और रोग बढ़ने पर पीलिया का रूप लेता है और अंतिम चरण में पहुँचने पर हेपेटाइटिस लिवर सिरोसिस और यकृत कैंसर का कारण भी बन सकता है। समय पर उपचार न होने पर इससे रोगी की मृत्यु तक हो सकती है। प्रारंभिक अवस्था रोग आरंभ होने के आरंभिक तीन माह तक रहती है। किंतु छः माह तक भी इसका उचित उपचार न होने पर यह दीर्घकालिक रोग में बदल जाती है। प्रारंभिक अवस्था में हेपेटाइटिस के साथ ही पीलिया भी हो जाने पर और फिर इसका पर्याप्त उपचार न किये जाने पर यह दीर्घकालिक हेपेटाइटिस बी या सी में बदल जाती है। इतने पर भी उचित उपचार न होने पर यह लिवर सिरोसिस में परिवर्तित हो जाती है जिसके परिणाम स्वरूप पूरा यकृत ही क्षतिग्रस्त हो जाता है और आगे चलकर यकृत कैंसर भी होने की संभावना होती है। अतिपाती हेपेटाइटिस के अधिकांश मामले विषाणुजनित संक्रमण से होते हैं। विषाणुजनित यकृत शोथ में पहला आता है हेपेटाइटिस-ए। यह रोग प्रमुखतया जलजनित रोग होता है। आंकड़ो के अनुसार हर वर्ष भारत में जलजनित रोग पीलिया के रोगियों की संख्या बहुत अधिक हैं। यह बीमारी दूषित खाने व जल के सेवन से होती है। जब नालियों व मल-निकासी का गंदा पानी या किसी अन्य तरह से प्रदूषित जल आपूर्ति के माध्यम में मिल जाता है जिससे बड़ी संख्या में लोग इससे प्रभावित होते हैं। आमतौर पर यह बीमारी तीन-चार हफ्तों के मात्र परहेज से ठीक हो जाती है

दूसरा है हेपेटाइटिस बी, जिसका मुख्य कारण मद्यपान है। हेपेटाइटिस-बी में त्वचा और आँखों का पीलापन (पीलिया), गहरे रंग का मूत्र, अत्यधिक थकान, उल्टी और पेट दर्द प्रमुख लक्षण हैं। इन लक्षणों से बचाव पाने में कुछ महीनों से लेकर एक वर्ष तक का समय लग सकता है। हेपेटाइटिस बी दीर्घकालिक यकृत संक्रमण भी पैदा कर सकता है जो बाद में लिवर सिरोसिस या लिवर कैंसर में परिवर्तित हो सकता है। तीसरा है हेपेटाइटिस सी, जिसे शांत मृत्यु या खामोश मौत की संज्ञा दी जाती है। आरंभ में इसका कोई प्रभाव नहीं दिखाई देता और जब तक दिखना आरंभ होता है, यह रोग संक्रमण से फैल चुका होता है। हाथ पर टैटू गुदवाने, संक्रमित खून चढ़वाने, दूसरे का रेज़र उपयोग करने आदि की वजह से हेपेटाइटिस सी होने की संभावना रहती है। हेपेटाइटिस सी के अंतिम चरण में सिरोसिस और लिवर कैंसर होते हैं। हेपेटाइटिस के अन्य रूपों की तरह हेपेटाइटिस सी, यकृत में सूजन पैदा करता है। हेपेटाइटिस सी वायरस मुख्य रूप से रक्त के माध्यम से स्थानांतरित होता है और हेपेटाइटिस ए या बी की तुलना में अधिक स्थायी होता है। चौथा है हेपेटाइटिस डी, जो तभी होता है जब रोगी को बी या सी का संक्रमण पहले ही हो चुका हो। हेपेटाइटिस डी विषाणु इसके बी विषाणुओं पर जीवित रह सकते हैं। इसलिए जो लोग हेपेटाइटिस से संक्रमित हो चुके हों, उनके हेपेटाइटिस डी से भी संक्रमित होने की संभावना रहती है। जब कोई व्यक्ति हेपेटाइटिस डी से संक्रमित होता है तो सिर्फ हेपेटाइटिस

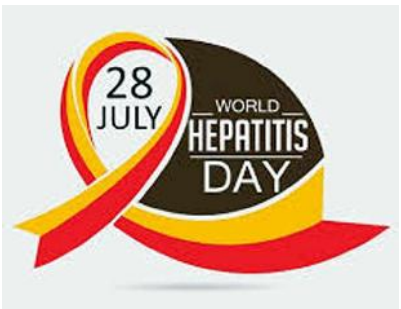

बी से संक्रमित व्यक्ति की तुलना में उसके यकृत की हानि की आशंका अधिक होती है। हेपेटाइटिस हेपेटाइटिस बी के लिये दी गई प्रतिरक्षा प्रणाली कुछ हद तक हेपेटाइटिस डी से भी सुरक्षा कर सकती है। इसके मुख्य लक्षणों में थकान, उल्टी, हल्का बुखार, दस्त, गहरे रंग का मूत्र होते हैं। अतः हेपाटाइटिस विषाणुओं के रूप में जाना जाने वाला विषाणुओं का एक समूह विश्व भर में यकृत को आघात पहुँचने के अधिकांश मामलों के लिए उत्तरदायी होता है। हेपाटाइटिस जीवविषों, विशेष रूप से शराब आदि, अन्य संक्रमणों या स्व-प्रतिरक्षी प्रक्रिया से भी हो सकता है। यह विषाणु मरीज़ के यकृत को निशाना बनाता है जिसके कारण शरीर स्थायी रूप से प्रभावित होता है। इससे डायरिया, भूख कम होना, उल्टियां होना, थकान, मांसपेशियों में दर्द, जोड़ों में दर्द, पेट दर्द, तेज बुखार और पीलिया जैसी समस्याएं हो सकती हैं।

बाघ बचाओ

29 जुलाई को अंतर्राष्ट्रीस बाघ दिवस (International Tiger Day) मनाया जाता है। भारत का राष्ट्रीय पशु बाघ (पेंथेरा टाइग्रिस) जंगल में रहने वाला मांसाहारी स्तनपायी है। इसके शरीर का रंग लाल और पीला का मिश्रण है। इस पर काले रंग की पट्टी पायी जाती है। वक्ष के भीतरी भाग और पाँव का रंग सफेद होता है। बाघ 13 फीट लम्बा और 300 किलो वजनी हो सकता है। बाघ अपनी प्रजाति में सबसे बड़ा और ताकतवर पशु है, जो तिब्बत, श्रीलंका और अंडमान निकोबार द्वीप-समूह को छोड़कर एशिया के अन्य सभी भागों में पाया जाता है। यह भारत, नेपाल, भूटान, कोरिया, अफगानिस्तान और इंडोनेशिया में अधिक संख्या में पाया जाता है। बाघ के संकट का एकमात्र कारण शिकार नही है बल्कि मूल कारण है उनकी भोजन श्रृंखला मे आयी कमी। यह कमी इसलिये आयी कि जहां एक ओर प्राकृतिक वन को इमारती लकड़ी के वनों में बदल दिया गया वहीं दूसरी ओर वनवासियों की प्राकृतिक जीवन शैली को भी बदल दिया गया है। बाघों एवं अन्य वन्यप्राणियों का और वनवासियों और उनकी जीवन शैली तथा वनस्पतियों का विकास लाखों वर्षों के विकासक्रम मे एक साथ हुआ था। इसमें से किसी एक घटक के साथ की गयी छेड़छाड़ का नतीजा तो बाकियों पर भी पड़ना निश्चित था फिर हमने तो सभी घटकों के साथ जो किया है, उसके कुछ परिणाम तो सामने है कुछ आने अभी बाकी है। आज बाघ के वास स्थलों की क्षति और अवैध शिकार के कारण यह संकटग्रस्त प्राणी बन गया है। पूरी दुनिया में इनकी संख्या छह हज़ार से भी कम है। भारत के बाघ को एक अलग प्रजाति माना जाता है, जिसका वैज्ञानिक नाम है पेंथेरा टाइग्रिस टाइग्रिस। बाघ की नौ प्रजातियों में से तीन अब विलुप्त हो चुकी हैं। ज्ञात आठ किस्मों की प्रजाति में से रायल बंगाल टाइगर उत्तर पूर्वी क्षेत्रों को छोड़कर देश भर में पाया जाता है साथ ही नेपाल, भूटान और बांगलादेश जैसे पड़ोसी देशों में भी पाया जाता है। वैज्ञानिक, आर्थिक, पारिस्थितिकीय और सौंदर्यपरक दृष्टिकोण से भारत में बाघों की वास्तविक आबादी को बरकरार रखने के लिए तथा हमेशा के लिए लोगों की शिक्षा व मनोरंजन के हेतु राष्ट्रीय धरोहर के रूप में इसके जैविक महत्व के क्षेत्रों को परिरक्षित रखने के उद्देश्य से केंद्र द्वारा प्रायोजित बाघ परियोजना प्रोजेक्ट टाईगर (बाघ बचाओ परियोजना) वर्ष 7 अप्रैल, 1973 में शुरू की गई थी। इसके अन्तर्गत आरम्भ में 9 बाघ अभयारण्य बनाए गए थे। आज इनकी संख्या बढ़कर 32 हो गई है। यह केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित परियोजना है। बाघों का अनुमान लगाने के लिए एक वैज्ञानिक तरीका अपनाया गया। इस नये तरीके से अनुमानतया 93697 किलोमीटर क्षेत्र को बाघों के लिए संरक्षित रखा गया है। उस क्षेत्र में बाघों की संख्या अनुमानतया 1411 है, अधिकतम 1657 और नई वैज्ञानिक विधि के अनुसार न्यूनतम 1165 है। इस आकलन के नतीजे भविष्य में बाघों के संरक्षण की रणनीति बनाने में बहुत उपयोगी सिद्ध होंगे। बाघ संरक्षण संबंधी अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर चर्चा के लिए बाघ पाए जाने वाले देशों में एक ग्लोबल टाइगर फोरम का गठन किया गया है। बाघों के पुनर्वास के लिए हमारे देश ने टाइगर हैवन स्थापित कर मिसाल पेश की है। उत्तर प्रदेश के जनपद लखीमपुर में टाइगर हैवन स्थान बाघ और तेन्दुओं के सफल पुनर्वासन के कारण विश्व प्रसिद्ध हुआ, जो दुधवा राष्ट्रीय उद्यान की सीमा से लगा हुआ सुहेली नदी के तट पर स्थित है। वास्तव में यह स्थान टाइगर मैन बिली अर्जन सिंह का निवास स्थान था, जहाँ बाघ, कुत्ते और तेन्दुए एक साथ रहते थे। यह। यह पुनर्वासन कार्यक्रम भारत की पूर्व प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी के वन्य-जीवों के प्रति लगाव के कारण संभव हो पाया। उन्हीं के द्वारा इस प्रोजेक्ट को सफलता पूर्वक संपन्न करने का कार्य बिली अर्जन सिंह ने किया था। दुनिया का यह पहला सफल प्रयोग था, जब किसी चिड़ियाघर से या मनुष्य द्वारा पालतू बाघ या तेन्दुए के शावक को वयस्क होने पर उसे जंगल में पुनर्वासित किया गया।

research.rog@rediffmail.com

आईसेक्ट समूह का पांचवा विश्वविद्यालय खंडवा में प्रारंभ होगा

अब खंडवा बनेगा निमाड़ क्षेत्र का एजुकेशन हब : संतोष चौबे

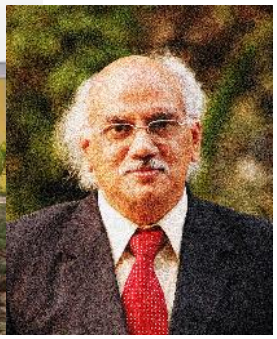

देश के अग्रणी उच्च शिक्षा व कौशल विकास समूह आईसेक्ट का पांचवा विश्वविद्यालय मध्य प्रदेश के खंडवा में स्थापित किया जा रहा है। खंडवा का यह विश्वविद्यालय देश के प्रसिद्ध वैज्ञानिक और नोबल पुरस्कार विजेता डॉ. सी. वी. रामन् के नाम से स्थापित होगा। हाल ही में जारी मध्यप्रदेश शासन के राजपत्र में डॉ. सी. वी रामन् विश्वविद्यालय खंडवा को शामिल किया गया है। आईसेक्ट वर्तमान में शिक्षा, कौशल विकास, प्रशिक्षण सेवाओं एवं ई गवर्नेंस के लिये देश के सबसे बड़े नेटवर्क के रूप में 29 प्रदेश एवं तीन केन्द्र शासित प्रदेशों में 20,000 केन्द्रों के माध्यम से कार्य कर रहा है। विश्वविद्यालय अपना प्रथम सत्र जुलाई 2018 से प्रारंभ करेगा। विश्वविद्यालय के केन्द्र बिंदु विश्वस्तरीय आधारभूत संरचना, आधुनिक तकनीकी के द्वारा शिक्षा, कौशल आधारित शिक्षा, शोध और नवाचार हैं। विश्वविद्यालय में प्रबंधन, वाणिज्य, कृषि, विज्ञान, सूचना प्रौद्योगिकी एवं कला के स्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम प्रारंभ किये जाएंगे। इनके अलावा संबंधित संकायों में शॉर्ट टर्म कौशल आधारित पाठ्यक्रम भी शुरु किए जाएंगे। विश्वविद्यालय में आवश्यक आधुनिक लैब, कृषि लैब, विज्ञान की लैब, कम्प्यूटर लैब, पुस्तकालय, सेमिनार हाल और खेल के मैदान की व्यवस्था उपलब्ध है। विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों के सॉफ्ट और कम्युनिकेशन स्किल्स के विकास के लिये लैंग्वेज लैब भी है। आईसेक्ट समूह का मध्यप्रदेश में रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय भोपाल के बाद यह दूसरा विश्वविद्यालय है। छत्तीसगढ़ में डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय बिलासपुर, झारखंड में आईसेक्ट विश्वविद्यालय हज़ारीबाग और बिहार में डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय वैशाली का सफल संचालन भी आईसेक्ट द्वारा किया जा रहा है।

आईसेक्ट के महानिदेशक संतोष चौबे ने आईसेक्ट समूह के पांचवें विश्वविद्यालय के प्रारंभ होने पर प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा कि आईसेक्ट देश के शैक्षणिक रूप से पिछड़े क्षेत्रों में उच्च शिक्षा का विशेष नेटवर्क विकसित करने के लिये प्रतिबद्ध है। जिसका लक्ष्य इन इलाकों में छात्र-छात्राओं को विश्वस्तरीय गुणवत्तायुक्त शिक्षा प्रदान करना है। सरकार ने 2020 तक शिक्षा क्षेत्र में सकल नामांकन अनुपात (जी.ई.आर.) 30 प्रतिशत हासिल करने का लक्ष्य निर्धारित किया है। आईसेक्ट इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए अपना योगदान दे रहा है। हमने ग्रामीण इलाकों में बेहतरीन शोध सुविधाएं, डिजिटल प्लेटफॉर्म और विश्वस्तरीय परिसर स्थापित किये हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि खंडवा में स्थापित डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय से अब खंडवा एजूकेशन हब के रुप में उभरेगा और पूरे निमाड़ क्षेत्र में शिक्षा की दृष्टि से उल्लेखनीय परिवर्तन होगा।

पदार्थ विज्ञान पर राष्ट्रीय संगोष्ठी

रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय में एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी ''स्मार्ट मटेरियल फॉर डिवाईसः पर्सपेक्टिव एंड रिसर्च डायरेक्शन'' विषय पर आयोजित की गई। इस संगोष्ठी में डॉ. प्रशांत कुमार पंडा, मुख्य वैज्ञानिक, (सी.एस.आई.आर.), डॉ. टाटा नरसिंहा राव, (वैज्ञानिक एवं एसोसियेट डायरेक्टर, ए.आर.सी.टी. हैदराबाद), डॉ. निबास, (वैज्ञानिक एफ लेसर मटेरियल विभाग, आर.आर. कैट इंदौर डी.ए.ई.), और डॉ. रूपा दास गुप्ता, (मुख्य वैज्ञानिक एम्प्री भोपाल) कीनोट स्पीकर थे। डॉ. प्रशांत कुमार पंडा ने पीजो इलेक्ट्रीक पदार्थ के संबंध में विस्तार से जानकारी दी और बताया कि पी.जेड.टी. ऊर्जा उत्पादन में किस तरह लाभकारी है। पीजो इलेक्ट्रीक पवन चक्की, संचार अनुपयोग, एयरोस्पेस में इन पदार्थों के उपयोग के संबंध में जानकारी दी। डॉ. टाटा नरसिंहा राव ने अपने प्रेजेंटेशन में नैनो टेक्नोलॉजी पर आधारित अनुप्रयोगों की जानकारी दी। डॉ. श्रीनिबास और डॉ. रूपा दास गुप्ता ने पदार्थ विज्ञान के नए शोध पर अपने व्याख्यान दिये।

दो दिवसीय 'भारत में विज्ञान' पाठ्यक्रम निर्माण कार्यशाला संपन्न

रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के डॉ.सी.वी.रामन विज्ञान प्रसार केंद्र द्वारा भारत में विज्ञान की परंपरा और चिंतन-दर्शन की सुव्यवस्थित दीर्घकालीन प्रणाली तथा आधुनिक भारत में विज्ञान की विकासोन्मुख दिशा को फोकस में रखकर 'भारत में विज्ञान' पाठ्यक्रम निर्माण की दो दिवसीय कार्यशाला दिनांक 25 एवं 26 मई 2018 को आयोजित की गई। इस कार्यशाला में रिसोर्स ग्रुप सदस्यों के रूप में रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के समकुलपति अमिताभ सक्सेना, सेंटर फॉर अन्त्रप्रोनेर्शिप एवं इन्क्यूबेशन के सी.ई.ओ. नितिन वत्स, वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं लेखक डॉ.कपूरमल जैन,प्रख्यात विज्ञानी डॉ.रवि मिश्रा (गोवा), देश की लोकप्रिय एवं बहुचर्चित विज्ञान लेखिका डॉ. श्रीमती शुभ्रता मिश्रा (गोवा), डॉ.एस.आर.अवस्थी एवं डॉ. सी.वी. रामन विज्ञान प्रसार केंद्र के निदेशक प्रो.राग तेलंग शामिल हुए। नई दृष्टि से विकसित किया जा रहा "भारत में विज्ञान" पाठ्यक्रम ज्ञानात्मक शैली का होगा न कि सिर्फ सूचनात्मक (इंफार्मेटिव)। जो कि छात्रों को सृजनशील व रचनात्मक बनाये बल्कि यह समझ विकसित करने की भी कोशिश करेगा कि विज्ञान का अर्थ सिद्धांत और प्रयोग में डूबे रहना नहीं है अपितु यह एक तरीका/शैली है जानने-समझने की। बड़े वैज्ञानिकों की जीवन यात्रा को जानकर यह भाव समझ में आता है। पाठ्यक्रम के माध्यम से छात्र में भारतीय विज्ञान की समृद्ध परम्परा के प्रति सम्मान भाव पैदा होगा। पाठ्यक्रम का स्वरूप जिज्ञासा पैदा करने वाला होगा ताकि छात्र अपने उत्तरों की तलाश में स्वयं आगे बढें। पाठ्यक्रम में कोशिश होगी कि छात्र पढ़कर नवाचारी बने, मेक इन इंडिया, स्किल इंडिया की भावना के अनुरूप। पाठ्यक्रम में स्थानीय पारिस्थितिकी और भूगोल-पर्यावरण को समावेशित करने के कोण को ध्यान में रखा जाएगा साथ ही प्रकृति और मनुष्य के अन्तरसंबंध को जानने समझने और उससे एकात्म होने की उत्कंठा छात्र में जागृत होगी। पाठयक्रम रूचिकर होगा और छात्रों के साथ-साथ पाठ्यक्रम के फोकस में विज्ञान-शिक्षक-विज्ञान शिक्षण संचारक-प्रेरक और पालक भी होंगे। सभी मॉड्यूल्स में क्रमबद्धता बनाए रखने के लिए कंटीन्यूटी एलीमेंट अनिवार्य रूप से समाहित किया जाएगा ताकि कुल पाठ्यक्रम रोचक व ज्ञानवर्द्धक तैयार हो। यह पाठ्यक्रम सभी विज्ञान में अभिरुचि रखने वालों के लिए, साइंस व टेक्नॉलॉजी पढ़ाने वालों के लिए तथा समस्त शैक्षिक जगत के लिए इनपुट का काम करेगा और पाठक/छात्र के लिए उनके मस्तिष्क में आइडिया बैंक निर्माण की प्रक्रिया को विकसित करने में मदद करेगा, कुछ इस तरह कि यह पाठ्यक्रम सभी के लिए एक सन्दर्भ पुस्तक बन जाए।

पाठ्यक्रम निर्माण की इस दो दिवसीय कार्यशाला के प्रथम दिवस के सत्रारंभ में रिसोर्स ग्रुप सदस्यों का पुष्पों से स्वागत रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के सेंटर फॉर अन्त्रप्रोनेर्शिप एवं इन्क्यूबेशन के सी.ई.ओ. नितिन वत्स ने किया, साथ ही समकुलपति अमिताभ सक्सेना ने प्रस्तावित पाठ्यक्रम पर अपने विचार व्यक्त किये। डॉ. सी. वी. रामन विज्ञान प्रसार केंद्र के निदेशक एवं कार्यशाला के संयोजक राग तेलंग ने प्रस्तावित पाठ्यक्रम की तैयारी की विशद पृष्ठभूमि और महत्व पर प्रकाश डाला। प्रसंगवश रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के टैगोर स्टूडियो में रिसोर्स ग्रुप सदस्यों की 30 मिनट अवधि की एक विज्ञान वार्ता रिकॉर्ड की गई जिसका संचालन डॉ.सी.वी.रामन विज्ञान प्रसार केंद्र के निदेशक एवं कार्यशाला के संयोजक राग तेलंग ने किया। तत्पश्चात रिसोर्स ग्रुप सदस्यों ने रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो.ए.के. ग्वाल एवं डॉ. सी.वी. रामन विश्वविद्यालय वैशाली (बिहार) के कुलाधिपति व वरिष्ठ सलाहकार (रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय) प्रो.वी.के.वर्मा से सौजन्य भेंट की। कार्यशाला के पहले दिन के पहले सत्र में रिसोर्स ग्रुप सदस्यों का प्रस्तावित पाठ्यक्रम के सभी विषयों के चयनित बिन्दुओं पर गहन विचार-विमर्श हुआ एवं एक निश्चित रूपरेखा को अंतिम स्वरूप तय किया गया। कार्यशाला के दूसरे दिन रिसोर्स ग्रुप के सभी सदस्यों ने अपने-अपने स्रोतों से सन्दर्भ सामग्री तैयार की। रिसोर्स ग्रुप के सदस्यों ने पुस्तकों तथा पाठ्यक्रम से संबधित विषयों के स्वरचित साहित्य-आलेखों की मूल प्रतियां संयोजक राग तेलंग कार्यशाला संयोजक एवं निदेशक, डॉ.सी.वी. रामन विज्ञान प्रसार केंद्र को सौपीं।

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' विज्ञानकथा पुरस्कार प्रतियोगिता

विज्ञानकथा, विज्ञान-गल्प या साइंस-फिक्शन एक लोकप्रिय विधा है। हिन्दी में विज्ञानकथाओं पर बहुत ही महत्वपूर्ण काम हुआ है। कई साइंस फिक्शन फिल्मों की अपार सफलता इस बात का परिचायक है। विज्ञानकथाएँ जीवन-जगत के रहस्यों को तार्किक, प्रामाणिक और कथात्मक ढंग से पाठकों के सामने प्रस्तुत करती हैं।

विज्ञानकथा लेखन को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से हम 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए विज्ञानकथा पुरस्कार' प्रतियोगिता आयोजित कर रहे हैं। अगर आपकी रुचि विज्ञान लेखन में है और आप विज्ञानकथा लिखते हैं तो इस प्रतियोगिता में आपका स्वागत है। आप अपनी विज्ञानकथा डाक अथवा मेल द्वारा 30 सितम्बर 2018 तक 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' कार्यालय में भेज सकते हैं। प्रतियोगिता के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं का अध्ययन-अनुकरण आवश्यक है :

- रचना 3000 शब्दों से अधिक न हो एवं टाइप की हुई हो।
- रचनाकार द्वारा रचना का मौलिक एवं अप्रकाशित, अप्रसारित होने का स्वघोषित प्रमाण पत्र संलग्न हो।
- पुरस्कृत विज्ञानकथाओं को 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में प्रकाशित किया जाएगा। इन रचनाओं का कॉपीराइट 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' का होगा।
- प्रतिभागी यह सुनिश्चित कर लें कि वे जो प्रविष्टि विज्ञानकथा प्रतियोगिता में भेज रहे हैं, वह अन्यत्र प्रेषित अथवा प्रकाशित न हो।
- पुरस्कार का निर्णय 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' निर्णायक मंडल का होगा जो कि सभी प्रतिभागियों के लिए बाध्यकारी होगा एवं इस संबंध में कोई दावा/आपत्ति मान्य नहीं होगी।

पुरस्कार इस प्रकार होंगे :

- प्रथम पुरस्कार - 31,000 (इकतीस हजार रुपये)
- द्वितीय पुरस्कार - 21,000 (इक्कीस हजार रुपये)
- तृतीय पुरस्कार - 11,000 (ग्यारह हजार रुपये)

संपर्क :

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए विज्ञानकथा पुरस्कार प्रतियोगिता'

संपादक, इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए
आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस, एन.एच.–12, होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल–462047
फोन : 0755-6766166 (डेस्क), 0755-6766101, 0755-6766147 (रिसेप्शन), 0755-6766110(फैक्स)
e-mail : electroniki@electroniki.com, electronikiaisect@gmail.com

अधिक जनकारी के लिए संपर्क सूत्र

- राग तेलंग - 9425603460
- मोहन सगोरिया - 9630725033
- रवीन्द्र जैन - 8889556622